मूल्य-25 रुपये
वर्ष-1, अंक-1, जनवरी से मार्च, 2009

प्रवेशांक

पारस-परखान

हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी

पारस-बेला न्यास

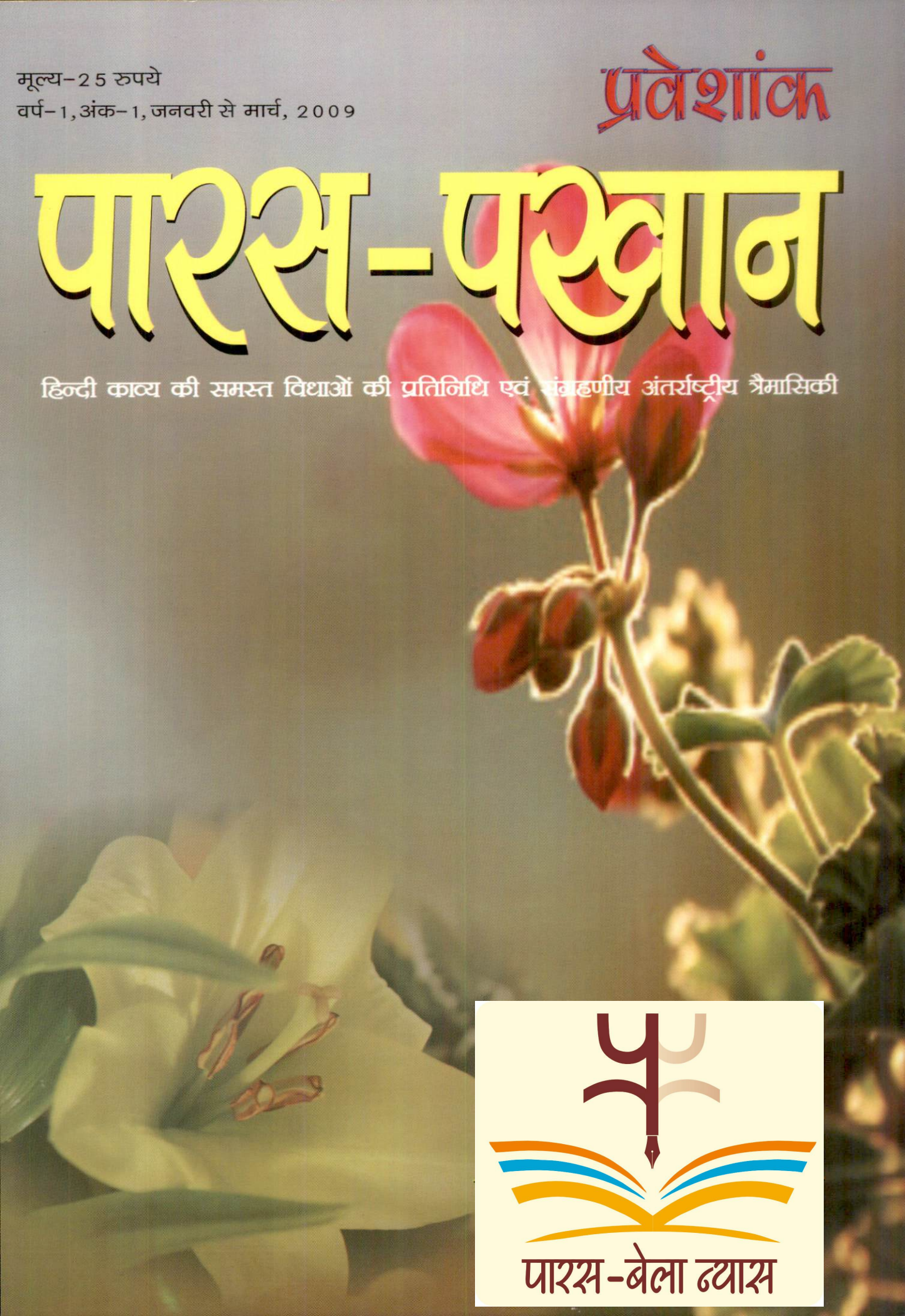

For Further Enquiry Call : 0931135455, 09311443631

अंक–1, जनवरी–मार्च, 2009

मूल्य : 25 रुपये

अनुक्रमणिका

पारस–पखान

(हिन्दी काव्य की समस्त विधाओं की प्रतिनिधि एवं संग्रहणीय अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिकी)

संपादकीय		2
श्रद्धांजलि	डॉ. मनीष पाण्डेय	4
मेरे बाबू जी	डॉ. अनिल कुमार	5
कालजयी		
किसको नमन करूं मैं?	डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर'	6
सरफ़रोशी की तमन्ना	रामप्रसाद बिस्मिल	7
भारत मां की लोरी	देवराज दिनेश	8
भारत-स्तवन	पं. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'	11
कचहरी	कैलाश गौतम	12
ग़ज़ल	कृष्ण बिहारी 'नूर'	25
समय के सारथी		
परमाणु विस्फोट	हरिओम पंवार	18
जीवन नहीं मरा करता है	गोपालदास 'नीरज'	22
तिरंगा	राजेश 'चेतन'	15
बताओ, हम क्या करें?	प्रवीण शुक्ल	17
प्रिय! मिल जाना तुम...	डॉ. अशोक मधुप	21
हाइकू	कमलेश भट्ट 'कमल'	24
मेरे प्यारे वतन	कमलेश शर्मा	32
पीयूष-घटों का आमन्त्रण	राजेन्द्र 'राजन'	13
रस की फुहार	देवमणि पांडेय	27
प्रवासी के बोल		
रिश्ते, मुक्तक	अनूप भार्गव	23
पत्थरों के इस शहर में	जय वर्मा	24
साक्षात्कार		
हास्य शरीर है...	श्री गोपाल प्रसाद व्यास	28
नारी-स्वर		
दुनिया जादू का पिटारा	डॉ. सुमन दुबे	14
अध्यात्म जगत		
मानस-मंदिर का महादीप	आचार्य महाप्रज्ञ	32
नवांकुर		
मां के जैसा प्यार	सलिल सागर	26
जिज्ञासा		27
शायरों की महफिल		16

संपादक
डॉ. सुनील जोगी

सह-संपादक
अमृतेश्वरचरण

संरक्षक
डॉ. एल.पी. पाण्डेय;
श्री अभिमन्यु कुमार पाठक;
श्री अरुण कुमार पाठक;
श्री राजेश प्रकाश;
डॉ. अनिल कुमार।

लेआउट एवं टाइपसेटिंग :
इंडिका इन्फोमीडिया, जनकपुरी, नई दिल्ली - 58
मुख-पृष्ठ : आई.के. क्रिएशन्स

मूल्य : 25 रुपए
वार्षिक : 100 रुपए
पंचवार्षिक : 450 रुपए
आजीवन : 5,000 रुपए
विदेशों में : $ 5
(एक अंक)

प्रवासी संपादकीय सलाहकार
डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल (नार्वे)

संपादकीय कार्यालय
आर-101 ए, गीता अपार्टमेन्ट
खिड़की एक्सटेन्शन,
मालवीय नगर
नयी दिल्ली-110017
दूरभाष - 98110-05255

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक **डॉ. अनिल कुमार** द्वारा अभिषेक प्रिंटर्स, सी, 136, फेज 1, नारायणा, इंडस्ट्रियल एरिया, नयी दिल्ली में मुद्रित एवं सी-49, बटलर पैलेस कॉलोनी, जॉपलिंग रोड, लखनऊ से प्रकाशित। संपादक - **डॉ. सुनील जोगी**।

'पारस-पखान' में प्रकाशित रचनाओं के रचयिताओं के विचार अपने हैं। विवादास्पद मामले लखनऊ न्यायालय के अधीन होंगे। संपादन एवं संचालन पूर्णतया अवैतनिक और अव्यावसायिक।

संपादकीय

कविता, साहित्य की एक ऐसी विधा है, जो मनुष्य की हृतन्त्री को झंकृत कर उसमें आनन्द का संचार करती है। वह उसके मर्मस्थल पर प्रहार कर उसकी सोच के आकाश को विस्तार देती है। उसको पढ़-सुनकर कुछ समय के लिए मनुष्य अपने दुःख-दैन्य, कष्ट, निराशा, असफलता–सब कुछ भूलकर उससे तदाकाराकारित हो जाता है। उसके सुषुप्त भाव जाग जाते हैं और उसे नयी दृष्टि मिलती है। कविता मनुष्य को सच्चे अर्थों में 'मनुष्य' बनाती है।

हिन्दी कविता ने काव्येतिहास के अनेक कालों में कई उतार-चढ़ाव देखे और उनको सफलतापूर्वक पार किया। उसकी आत्मा मरी नहीं, लेकिन नयी कविता के दौर में उस पर तरह-तरह के प्रयोग किये गये। उस संक्रमण काल में अति प्रयोगधर्मिता के कारण एक बार तो ऐसा लगा कि हिन्दी कविता नष्ट ही हो जायेगी और अपने मूल स्वरूप में पुनः कभी वापस नहीं लौट पाएगी। साथ ही पिछले कुछ दशकों से हिन्दी काव्य-मंच को भांड-मीरासी और चुटकुलेबाज-नौटंकीबाज कवियों ने भी विकृत किया। इन दोनों ही तथ्यों के आलोक में कविता का ये नुकसान हुआ कि उसका पाठक-श्रोतावर्ग उससे दूर छिटकने लगा। हिन्दी की नामचीन पत्रिकाएं भी कतिपय कारणों से बन्द होती चली गईं, अखबारों में साहित्य के कॉलम गायब हो गए और प्रकाशक कविता-संकलन प्रकाशित करने से परहेज करने लगे। लेकिन निराशा के घटाटोप में आशा की स्वर्णिम किरण छिपी रहती है, उसी तरह ऐसी विषम परिस्थितियों में कुछ अग्निधर्मा रचनाकारों ने हिन्दी कविता को संजीवनी पिलाकर जिन्दा रखा, उसको अकाल काल-कवलित नहीं होने दिया। उन्होंने गीत-नवगीत, ग़ज़लें, छन्द, दोहे आदि लिखकर कविता को नयी ऊंचाइया दीं। कुछ रचनाकार अब भी निरन्तर बेहतर लिखकर क्षरित होती जा रही काव्य-परम्परा को सहेजने का भगीरथ-प्रयास कर रहे हैं। दूरदर्शन और विभिन्न प्राइवेट चैनलों ने भी कविता पर आधृत कार्यक्रमों की शुरुआत करके अपना महती योगदान दिया है।

इंटरनेट संस्कृति के इस युग में मुद्राराक्षसों के दल-के-दल पैदा हो गये हैं। उसकी सोच व्यक्तिवाद पर केन्द्रित होकर केवल अर्थ तक सिमटकर रह गई है। उनकी कोमल भावनाओं पर तुषारापात हो गया है और वे संस्कृतिभक्षी हो गये हैं। पॉप और रॉक म्यूजिक पर थिरकने वाले ये काले अंग्रेज हिन्दी कविता के नाम पर नाक-भौं सिकोड़ते हैं। ऐसे में कविता को समुचित मंच प्रदान कर उसके संरक्षण हेतु सार्थक प्रयास करना जरूरी हो गया है, जिससे लोग कविता की ओर वापस मुड़ सकें।

वर्तमान में यद्यपि साहित्य की अनेक पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं, लेकिन ऐसी पत्रिकाओं का अभाव है जिनमें केवल कविताएं ही प्रकाशित होती हों। इस दिशा में सार्थक एवम् ठोस पहल की है–उत्तर प्रदेश प्रान्तीय प्रशासनिक सेवा के उच्चाधिकारी डॉ. अनिल कुमार पाठक ने। वे स्वयं एक अच्छे कवि हैं। उन्होंने अपने पिता और पुरानी पीढ़ी के सशक्त कवि-प. पारसनाथ पाठक 'प्रसून' की पावन स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए 'पारस-पखान' नाम से एक काव्य-त्रैमासिकी प्रकाशित करने का संकल्प किया है। उस संकल्प को सिद्धि प्रदान करने के लिए पत्रिका का प्रवेशांक (जनवरी-मार्च, 2009) प्रकाशित किया जा रहा है। 'पारस-पखान'–जैसा इसके नाम से ही स्पष्ट है; यह एक ऐसा पारस पत्थर है, जिसके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति 'स्वर्णकाय' हो जाएगा। इसमें काव्य की विभिन्न विधाओं से सम्बन्धित रचनाएं होंगी, कुछ स्थायी स्तम्भों के साथ एक पुरस्कार-प्रतियोगिता भी! यह एक ऐसा मंच होगा, जो कवियों की सार्थक रचनाओं को प्रकाशित करेगा। सात समन्दर पार रहने वाले प्रवासी भारतीय रचनाकार भी अपने व्यस्ततम

समय में से कुछ क्षण सृजन को समर्पित कर हिन्दी कविता को समृद्ध कर रहे हैं। पत्रिका के अंक में उनकी भी रचनाएं शामिल की जाएंगी। इस तरह से यह एक अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका होगी, जो देश-विदेश के रचनाकारों में परस्पर संवाद कराएगी। इस बार हम अमेरिका के श्री अजय भार्गव और यू. के. की सुश्री जय वर्मा की रचनाएं प्रकाशित कर रहे हैं।

पिछला वर्ष बेहद उथल-पुथल वाला रहा। इसमें कुछ सार्थक हुआ और कुछ ऐसा भी, जिसे भूल जाने में ही भलाई है। 18 जुलाई, 2005 को संकल्पित भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु करार तीन वर्षों की लम्बी प्रक्रिया और जद्दोजहद के बाद आखिर सितम्बर, 2008 में परवान चढ़ गया। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत के खाते में यह एक उपलब्धि रही, जिससे पिछले चौतीस वर्षों से परमाणु-क्षेत्र में जारी उसका वनवास खत्म हुआ। भारत के फ्रांस व रूस के साथ भी द्विपक्षीय परमाणु समझौते हुए। इससे भारत की स्थिति मजबूत हुई। चंद्रयान की सफलता ने इतिहास रच दिया। इस हेतु हमारे वैज्ञानिक बधाई के पात्र हैं। चीन में सम्पन्न हुए ओलम्पिक खेलों में व्यक्तिगत प्रतिस्पर्द्धा में भारत के अभिनव बिंद्रा ने स्वर्ण पदक हासिल किया और भारतीय बाक्सरों ने भी कांस्य पदक जीता। इससे खेलों में अब तक पिछड़ रहे भारत का मान बढ़ा। लेकिन सबसे अधिक दुःख की घड़ी तब आई, जब भारत की आर्थिक राजधानी मुम्बई पर आतंकवादी हमले हुए, जिसने पूरे राष्ट्र के जनमानस को झकझोर दिया। इससे भारत की छवि दरकी। हमने अनेक जांबाज पुलिस अधिकारियों और सिपाहियों को खोया। लगभग दो सौ देशी-विदेशी लोग मारे गये। हम सभी मृतकों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

भारत पर सबसे अधिक आतंकी हमले सन् 2008 में ही हुए, लेकिन हमारा देश राष्ट्र-विरोधी शक्तियों को मुंह-तोड़ जवाब देने को पुनः मजबूत इरादों के साथ उठ खड़ा हुआ।

नव वर्ष-2009 दबे-पांव हम सबके घर में घुस आया। उसका बहुत-बहुत स्वागत-अभिनन्दन और आप सबको नववर्ष की स्वस्तिक बधाई।

जिन रचनाकारों की रचनाएं पत्रिका में शामिल की गई हैं, हम उनके आभारी हैं। सुधी पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य अवगत कराएं, ताकि भविष्य में इसमें अपेक्षित सुधार किए जा सकें।

सादर,
आपका

डॉ. सुनील जोगी, दिल्ली
(संपादक)
मोबाइल 09811005255
ई-मेल-kavisuniljogi@gmail.com
वेबसाइट-www.hasyakavisammelan.com

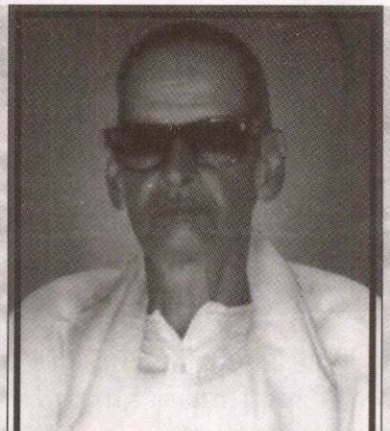

स्व. पारस नाथ पाठक 'प्रसून'
17 जुलाई, 1932-23 जनवरी, 2008

श्रद्धांजलि

डॉ. मनीष पाण्डेय

पाथेय सदा शुभ-भावों के
रचना-पथ पर जो लिये चला;
रस-परिपूरित मकरन्द-सुधा का
पूर्ण सत्त्व जो पिये चला;
सत्य और सदाशयता के हित,
अन्तस् के व्रण जो सिये चला;
नानाविध शब्दों की निधि को
आत्माभिव्यक्ति जो दिये चला;
थकना था नहीं जिसे स्वीकृत,
हर राह सुगम जो किये चला;
पावस का वह चितचोर-मेघ,
मरु-हृद हर, सिञ्चित किये चला;
'**ठ**हराव नहीं',–जीवन-पथ का
जो ध्येय, हृदय में लिये चला;
कष्टों का तम हरने को जो,
बन दीपावली के दीये, चला;
है वह '**प्रसून**' किस राह चला?
वाटिका काव्य की, रीती है।
निःशेष सुधाकर निष्ठुर है,
राका रो-रोकर जीती है।।

मेरे बाबू जी

डॉ. अनिल कुमार पाठक

पारस-परस कुधातु सुहाये,
ऐसे मेरे बाबूजी।
नया सवेरा, नई रोशनी,
लाये मेरे बाबू जी।।
हम मिट्टी के लोदों को,
इक रूप निराला दे डाला।
अंकुर आते जो मुरझाया,
नवजीवन उसको दे डाला।
मरुथल में भी जीवन-धारा
बन आये मेरे बाबू जी।।
नया सवेरा, नई रोशनी
लाये मेरे बाबू जी।।
अन्धकार से दूर, ज्योति तक
सत्पथ दिखलाने वाले।
कठिन राह में दिग्दर्शक बन,
मंजिल तक पहुंचाने वाले।
हार कभी ना मानी जिसने,
योगी मेरे बाबू जी।।
नया सवेरा, नई रोशनी
लाये मेरे बाबू जी।
केवल पिता नहीं वे मेरे
गुरु, प्रदर्शक, मीत हैं।
इन अधरों की वाणी हैं वे
ये उनके ही गीत हैं।
ज्ञान और विज्ञान प्रवाहक,
प्यारे मेरे बाबू जी।
नया सवेरा, नई रोशनी
लाये मेरे बाबू जी।।

चांद देखने के लिए छत पर आई ओस।
सहसा बादल-सा घिरा सारा पास-पड़ोस।।
—कैलाश गौतम

23 सितम्बर, 1908 को बिहार के सिमरिया नामक छोटे-से गांव में जन्में राष्ट्रकवि **डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर'** का जन्मशताब्दी-वर्ष पिछले वर्ष मनाया गया। वे ओज के कवि के रूप में प्रसिद्ध थे, लेकिन 'उर्वशी' नामक प्रेम-काव्य लिखकर उन्होंने अपने इस मिथक को तोड़ा। उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुए। श्रद्धांजलि स्वरूप हम उनकी प्रसिद्ध रचना 'किसको नमन करूं मैं' प्रस्तुत कर रहे हैं।

किसको नमन करूं मैं?

डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर'

तुझको या तेरे नदीश गिरिवन को नमन करूं मैं?
मेरे प्यारे देश! देह या मन को नमन करूं मैं?
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

भू के मानचित्र पर अंकित त्रिभुज, यही क्या तू है?
नर के नभश्चरण की दृढ़ कल्पना नहीं क्या तू है?
भेदों का ज्ञाता, निगूढ़ताओं का चिरज्ञानी है;
मेरे प्यारे देश! नहीं तू पत्थर है, पानी है।
जड़ताओं में छिपे किसी चेतन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

तू वह, नर ने जिसे बहुत ऊंचा चढ़कर पाया था;
तू वह, जो संदेश भूमि को अम्बर से आया था।
तू वह, जिसका ध्यान आज भी मन सुरभित करता है;
थकी हुई आत्मा में उड़ने की उमंग भरता है।
गन्ध-निकेतन इस अदृश्य उपवन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

भारत नहीं स्थान का वाचक गुणविशेष नर का है,
एक देश का नहीं, शील यह भूमंडल भर का है।
जहां कहीं एकता अखंडित जहां प्रेम का स्वर है;
देश-देश में वहां खड़ा भारत जीवित भास्वर है।
निखिल विश्व की जन्मभूमि-वन्दन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

खंडित है यह मही, शैल से, सरिता से, सागर से;
पर जब भी दो हाथ निकल मिलते आ द्वीपान्तर से;
तब खाई को पाट शून्य में महामोद मचता है;
दो द्वीपों के बीच सेतु यह भारत ही रचता है।
मंगलमय इस महासेतु-बंधन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

दो हृदयों के तार जहां भी जो जन जोड़ रहे हैं,
मित्र-भाव की ओर विश्व की गति को मोड़ रहे हैं।
घोल रहे हैं जो जीवन-सरिता में प्रेम-रसायन,
खोल रहे हैं देश-देश के बीच मुंदे वातायन।
आत्मबन्धु कहकर ऐसे जन-जन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

उठे जहां भी घोष शान्ति का, भारत स्वर तेरा है,
धर्म-दीप हो, जिसके भी कर में, वह नर तेरा है।
तेरा है वह वीर सत्य पर जो अड़ने जाता है,
किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है।
मानवता के इस ललाट-चन्दन को नमन करूं मैं।
किसको नमन करूं मैं भारत! किसको नमन करूं मैं?

कैलेंडर को क्या पता तारीखों की भूल,
नयी सदी की आंख में दहक रहे हैं फूल।
—यश मालवीय

'अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के पुरोधा थे। 'सरफ़रोशी की तमन्ना' अपने समय की सर्वाधिक चर्चित-प्रशंसित और समाज के हर वर्ग द्वारा गायी जाने वाली रचना है।

सरफ़रोशी की तमन्ना

रामप्रसाद 'बिस्मिल'

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है।
क्यों नहीं करता कोई भी दूसरा कोई बातचीत,
देखता हूं मैं जिसे वो चुप तेरी महफिल में है।
ऐ शहीद-ए-मुल्क-ओ मिल्लत मैं तेरे ऊपर निसार,
अब तेरी हिम्मत का चरचा ग़ैर की महफ़िल में है।
वक़्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आसमां,
हम अभी से क्या बताएं क्या हमारे दिल में है।
खींचकर लाई है सबको क़त्ल होने की उमीद,
आशिकों का आज जमघट कूंचा-ए-क़ातिल में है।
सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है।

है लिए हथियार दुश्मन ताक में बैठा उधर,
और हम तैयार हैं सीना लिए अपना इधर।
ख़ून से खेलेंगे होली ग़र वतन मुश्किल में है,
सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।

हाथ जिनमें हो जुनूं कटते नहीं तलवार से,
सर जो उठ जाते हैं वो झुकते नहीं ललकार से।
और भड़केगा जो शोला-सा हमारे दिल में है,
सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है।

हम तो घर से निकले ही थे बांधकर सर पर क़फ़न,
जां हथेली पर लिए लो बढ़ चले हैं ये क़दम।
ज़िन्दगी तो अपनी महमां मौत की महफ़िल में है,
सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है।

यूं खड़ा मक़तल में क़ातिल कह रहा है बार-बार,
क्या तमन्ना-ए-शहादत भी किसी के दिल में है।
दिल में तूफ़ानों की टोली और नसों में इन्क़लाब,
होश दुश्मन के उड़ा देंगे हमें रोको न आज।
दूर रह पाए जो हमसे दम कहां मन्ज़िल में है,
सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-क़ातिल में है,
एक मिट जाने की हसरत अब दिल-ए-बिस्मिल में है।

इक भाषा इक जीव इक मति सब घर के लोग
तबै बनत है सबन सौ मिटत मूढ़ता सोग।
–भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

पुरानी पीढ़ी के हिन्दी काव्य-मंच के दृढ़ आधार स्तम्भ **देवराज दिनेश** ने 'भारत मां की लोरी' नामक अपनी इस कविता में भारत मां पर हो रहे अत्याचारों से आक्रोशित उसके महान सपूतों की वाणी को व्यक्त किया है। कविता वार्तालाप शैली में है।

भारत मां की लोरी

देवराज दिनेश

यह कैसा कोलाहल, कैसा कुहराम मचा
है शोर डालता कौन आज सीमाओं पर?
यह कौन हठी जो आज उठाना चाह रहा
हिम मंडित प्रहरी अपनी क्षुद्र भुजाओं पर?

मैं भारत मां अपने आंगन में बैठ सुनाती हूं लोरी
निज नन्ही-मुन्नी फसलों को सहलाती हूं
जीवन के मीठे मादक गीत सुनाती हूं
पतझड़ में भी मधु ऋतु लाने को आतुर हूं
रेतीले टीलों पर मधुमास बुलाती हूं
भाखड़ा बनाती हूं, नंगल, चंबल के साज सजाती हूं
अपनी अमराई में कोयल बन गाती हूं।

मेरे हर भौंरे की सांसों में गुंजन है
हर कली गन्ध से युक्त और मदमाती है।
फाख़्ता अमन की उड़ती है मेरे नभ में
यह किसका ख़ूनी पंजा बढ़ता आता है।
यह कौन हठी!
जो बार-बार आकर मेरे दरवाज़े से टकराता है?

यदि चाह तुम्हें है जीवन की बगिया फूले
अपनी सीमाओं में रहकर जीना सीखो
कोलाहल से आतंकित हमें करो मत तुम
उल्लास भरा ममता का मधु पीना सीखो

मेरे आंगन से सदा प्यार पाया तुमने
उसके बदले में अंगारे बरसाते हो
विषधर! फन फैलाकर आतंकित करते हो
मेरी करुणा का तुम यह मूल्य चुकाते हो?

बाहर भी कोलाहल, घर के भीतर भी कोलाहल
यह कौन जगा?
अंधियारे में किसका कर अपना खड्ग उठाने को आतुर?
"मैं हूं अशोक!"
"तू जाग गया है प्रियदर्शी!"
"हां, मां! मुझको नींद नहीं आती है,
मैंने करवट ली है,
क्या तुम पर कोई आफत आई है?
जो तेरे दरवाजे पर चिंघाड़ रहे हैं
उनसे कह दे–
मैंने कलिंग के महायुद्ध के बाद प्रतिज्ञा की थी
शस्त्र नहीं धारूंगा,
पर इसका यह अर्थ नहीं, कोई आक्रांता
मां तेरा वक्षस्थल रौंद चला जाएगा
औ, मैं शान्त रहूंगा।
कह दे मां, कह दे उससे–मेरा प्रियदर्शी जाग गया है।
फिर कलिंग की याद धरा को दिलवा देगा।"
"सो जा बेटा। ऐसी कोई बात नहीं है,
मेरे इस युग का प्रिय प्रहरी जागरूक है।"

यह क्या? केसर की क्यारी में
किसकी आंखें धधक रही हैं अंगारों-सी?
कौन जगा है?
"मैं हूं कनिष्क।'
"तू जाग गया है देवपुत्र!"

"हां, मां! मुझको नींद नहीं आती है
कैसा कोलाहल है?
क्या तुम पर कोई विपदा आई है
समझ गया मैं!
उनसे कह दे उनके घर में
धर्म, ज्ञान की गंगा स्वयं बहाई थी
मैंने ही जाकर!
उनकी झीलों में, मेरे घोड़ो ने जल-पान किया था
अब भी मेरे एक हाथ में धर्मग्रन्थ है,
एक हाथ में प्रबल खड्ग है,
उनकी जो इच्छा हो; आकर चुनना चाहें चुन लें।"
"सो जा देवपुत्र सो जा सुत!
ऐसी कोई बात नहीं है।
मेरे युग का प्रहरी पूरा जागरूक है।

यदि मुझको पड़ गयी जरूरत
तुझे जगा लूंगी मैं।"

यह क्या?
युगों-युगों से बजती मेरे कान्हा की
वंशी के मृदुस्वर कैसे मूक हो गए
कान्हा, कान्हा।
क्या है?
"तेरी वंशी के मादक स्वर कैसे मूक हो गए!"
"पता नहीं मां! क्यों मेरी अंगुलियां
वंशी के रंध्रो पर चलने से करतीं इन्कार
और तर्जनी खुद की इनसे अलग हुई जाती है
शायद चक्र उठाने को आतुर है,
क्या तुझ पर कोई विपदा आई है?
एक बात मैं तुझसे भी कह दूं मां–
इस रण में मैं युद्ध करूंगा
मुझ जैसा धनुर्धारी, चक्र-सुदर्शनधारी
अर्जुन के घोड़ों की खींचेगा लगाम
यह कब सम्भव है
गीता का उपदेश न मुझको देना होगा
गीता तो अब भारत की रग-रग में रची हुई है
इस रण में मैं युद्ध करूंगा
प्रलय स्वयं अवतरित धरा पर हो जाएगी।"

"सो जा कान्हा, सो जा नटवर
सो जा मेरे रास-रचैया सो जा
तेरे पग तो नर्तन करते ही अच्छे लगते हैं।"

"नृत्य करूंगा, मुझे शपथ तेरे चरणों की, नृत्य करूंगा
आज कलिया के हर फन पर नृत्य करूंगा
उससे कह दे निज सहस्र फन ताने अपने
मेरा केशव अब तेरे हर फन पर नृत्य करेगा।

"सो जा मोहन, भारण-रण की इच्छा से–
अब उद्वेलित मत हो
मेरे युग का प्रहरी पूरा जागरूक है।"

इधर मगध के खंडहरों में,
यह कृशकायी, आंखों मे शिव-शक्ति संजोये
पैर पटककर उन्मादी-सा घूम रहा है।

कौन जगा है? बाल नोंचता है क्यों अपने?
"मैं हूं मां चाणक्य!"
"विष्णुगुप्त कौटिल्य हठी तू जाग गया है।"
"पता नहीं मां मेरा कर क्यों बार-बार फिर मेरी
शिखा खोलने को अकुला उठता है।
क्या तुझ पर कोई आफ़त आई है?
चन्द्रगुप्त भी करवट बदल रहा है,
क्या कोई सैल्यूकस फिर बनकर आक्रांता
अपनी बेटी का डोला लेकर तेरे दरवाज़े पर आया है?
उससे कह दे–
तब तो केवल चार प्रान्त लेकर दहेज में; छोड़ दिया था
अबकी बार शिखा यह मेरी तभी बंधेगी
जब 'आक्रान्ता' शब्द धरा से मिट जाएगा।"
"सो जा मेरे लाल हठीले
मुट्ठी भर हड्डी के ढांचे सो जा!
मेरे युग का प्रहरी पूरा जागरूक है।"

सारा देश विचित्र भावना में उलझा है
हिमगिरि अंगारे बनने को आतुर
रेतीले टीले बन रहे बवंडर
मैदानों में जाग रहे धनुर्धारी
सागर की लहरों में भी आया उफान है
मैं, भारत मां, आकुल आज हुई जाती हूं।
यह सब क्या है?
बाहर भी कोलाहल घर के भीतर भी कोलाहल
दक्षिण, उत्तर, पूरब, पश्चिम तक फैला कोलाहल
"दक्षिण की फुलवारी मेरी महक रही है
उसमें से उठती है रह-रहकर कैसी हुंकार?
कौन जगा है?"
"मां मैं हूं पुलकेशन!
स्वयं हाथ मेरा प्रत्यंचा तान रहा है
ऐसा क्यों है?
क्या तुम पर कोई आफत आई है?
तेरी आज्ञा मान,
अतिथि का सदा किया सम्मान
अपने आंगन में उसके हित रास रचाए
दिया नेह का दान
चाहे तेरा पुत्र हर्ष हो या पुलकेशन
तेरी परम्परा की रक्षा सदा-सर्वदा हमने की है
उसी अतिथि के वंशज
शान्ति-पाठ को भूल
बन आक्रान्ता, रौब जमाएं
तेरी नयी-नवेली फसलों को धमकाएं!
तू ही बतला, सोच स्वयं मां
मेरे और हर्ष के रहते कब सम्भव है

कोई ऐसी दुर्घटना, ब्रह्मपुत्र, गंगा, गोदावरी
और गोमती के रहते घट जाए
हम सब सोएं, आक्रान्ता तुझको धमकाए
समझा दे मां उनको
मेरी सिंह-गर्जना सुन चट्टानें बनतीं पानी
मेरे तेवर देख शान्त सागर बनते तूफानी!"

"सो जा रे चालुक्य हठीले, सो जा
तेरे तेवर देख मुझे भी भय लगता है।"

यह क्या?
दिल्ली से लेकर फतेहपुरी सीकरी के मार्ग पर
किसके घोड़ों की टाप सुनाई देती है?
गौर-वर्ण उन्नत-ललाट, तू कौन जगा?
"हम हैं अकबर!"
"अकबर महान्, तू जाग गया मेरे बच्चे?"
"हां मां, हमको नींद नहीं आती है।
पता नहीं क्यों अपने माथे पर
खुद ही बल पड़ते जाते हैं
आंखों में पड़ते हैं डोरे लाल
भृकुटि स्वयं तनती जाती है
क्या कोई तुझ पर आफत आई है?
उनसे कह दे
अकबर औ' प्रताप एक है
अब उनमें आपस में युद्ध नहीं हो सकता
चेतक पर चढ़कर अकबर आएगा
हिमगिरि की छाती पिघलेगी चेतक की टापों से
तब क्या होगा?
बर्फ़ बनेगी अंगारे, तब क्या होगा?"

"सो जा बेटा, सो जा,
ऐसी कोई बात नहीं है।
मेरे इस युग का प्रिय प्रहरी जागरूक है।"

अरावली की घाटी पर यह कौन रगड़ता खड्ग
किसका खड्ग बार-बार इन चट्टानों से टकराता है?
अरे अभागे! तू अन्धा है
तुझको दीख नहीं पाता है
बता कौन है तू?
"मैं हूं राय पिथौरा।"
"पृथ्वीराज चौहान पुत्र तू जाग गया है?
"हां मां!"
बाहर वालों से तो ये तेरा अशोक है
ये कनिष्क है।

स्वयं कृष्ण जागे हैं
अकबर जाग गया है
स्वयं निपट लेंगे मां
मैं तो तेरे जयचन्दों का सिर काटूंगा
जिनके कारण मुझे पराजय पड़ी देखनी!
फिर देखूंगा
कौन प्रबल आक्रान्ता आकर इस धरती पर
करता है उत्पात!
पगली मां, भोली मां, शायद भूल गई है!
अन्धा हूं, तो क्या है
प्रबल शब्द वेधी हूं
आज शब्दवेधी का हर शर
स्वर पर जाकर
प्रबल लक्ष्य-सन्धान करेगा
प्रलय स्वयं अवतरित धरा पर हो जाएगी
तब क्या होगा।"

"सो जाओ, तुम सब सो जाओ
ऐसी कोई बात नहीं है
मेरे युग का प्रहरी पूरा जागरूक है
फिर तुम मुझसे दूर नहीं हो
मुझे ज़रूरत होगी, तुम्हें जगा लूंगी मैं।
निज विकास की मादक लोरी के स्वर
मुझको लहराने दो।"

रह-रहकर के कांपते बूढ़ी मां के हाथ।
बूढ़ा पीपल ही बचा अब देने को साथ।।
—रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु'

पं. पारसनाथ पाठक 'प्रसून' पुरानी पीढ़ी के एक सशक्त कवि हैं। उनका जन्म उत्तर प्रदेश प्रान्त के जिला जौनपुर के ग्राम गोपालपुर में 17 जुलाई, 1932 को हुआ था। प्रसून जी का एक काव्य-संग्रह 'स्वर बेला' प्रकाशित है। 'भारत-स्तवन' उनकी एक प्रसिद्ध रचना है, जिसे हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं।

भारत-स्तवन

पं. पारसनाथ पाठक 'प्रसून'

मां तेरे दर्शन से एक बार!
खिलती हैं कितनी मृदु आशाएं, खुलते हैं शत-शत मुक्ति द्वार।
सलिल-तरंगें धोती चरणों को, मन्द समीर न पंखा झलता,
नीले-नभ की छाया में है, मलयानिल ढोता सुरभि-यार।।
मां तेरे दर्शन से एक बार!
दूर क्षितिज के वातायन में, कनक-थाल में दीप सजाए,
प्रकृति-वधू तेरे पूजन को, गूंथ रही नव हीरक हार।
मां तेरे दर्शन से एक बार!
रवि अपलक आंखों से निरख रहा, तेरी छवि बटोर न पाता,
शत-शत किरणों के हाथों से खींच रहा वह मृदुल प्यार।
मां तेरे दर्शन से एक बार!
शांत उदधि की मृदु शय्या पर, शोभित तेरा यह उच्च भाल,
तेरी यह मूर्ति विजय की प्रतिमा, तेरा यह द्वार अभय का द्वार।
मां तेरे दर्शन से एक बार!
काव्य-कला तुझसे मिलती है, अमर विभूति तुम्हारी है,
सागर निज लोल तरंगों से, करता तेरे यश की पुकार।
मां तेरे दर्शन से एक बार!
यह रूप तुम्हारा कितना सुन्दर, स्नेह भरा कितना पावन,
मां तेरे चरणों के नीचे तक, क्या पहुंच सकूंगा एक बार?
मां तेरे दर्शन से एक बार!

आत्मा के सौन्दर्य का, शब्द रूप है काव्य।
मानव होना भाग्य है, कवि होना सौभाग्य।।
—गोपालदास 'नीरज'

स्वर्गीय कैलाश गौतम सामयिक व ज्वलन्त विषयों पर लिखने वाले विगत दशकों के एक सशक्त रचनाकार थे। 'कचहरी' नामक कविता में उन्होंने कचहरी में होने वाले दन्द-छन्द, षडयंत्रों की कुचालों-कुचक्रों को दमदार शैली में उकेरा है। यह एक पिता द्वारा अपने पुत्र को दी गई एक सीख में रूप में प्रस्तुत की गई है।

कचहरी

कैलाश गौतम

भले डांट घर में तू बीबी की खाना,
भले जैसे-तैसे गृहस्थी चलाना,
भले जाके जंगल में धूनी रमाना,
मगर मेरे बेटे! कचहरी न जाना।

कचहरी हमारी-तुम्हारी नहीं है,
कहीं से कोई रिश्तेदारी नहीं है,
अहलमद से मेरी भी यारी नहीं है,
तिवारी था पहले, तिवारी नहीं है।

कचहरी की महिमा निराली है बेटे,
कचहरी वकीलों की थाली है बेटे,
पुलिस के लिए छोटी साली है बेटे,
यहां पैरवी अब दलाली है बेटे।

कचहरी ही गुंडों की खेती है बेटे,
यहीं ज़िन्दग़ी उनको देती है बेटे,
खुलेआम क़ातिल यहां घूमते हैं,
सिपाही-दरोगा चरण चूमते हैं।

कचहरी में सच की बड़ी दुर्दशा है,
भला आदमी किस तरह से फंसा है,
यहां झूठ की ही कमाई है बेटे,
यहां झूठ का रेट हाई है बेटे।

कचहरी का मारा कचहरी में भागे,
कचहरी में सोये, कचहरी में जागे,
मरा-जी रहा है कचहरी में ऐसे,
है तांबे का हांडा सुराही में जैसे।

लगाते-बुझाते, सिखाते मिलेंगे,
हथेली पर सरसों उगाते मिलेंगे,
कचहरी तो बेवा का तन देखती है,
कहां से खुलेगा बटन देखती है।

कचहरी शरीफों की खातिर नहीं है,
उसी की कसम लो, जो हाजिर नहीं है,
है बासी मुंह घर से बुलाती कचहरी,
बुलाकर के दिन भर रुलाती कचहरी।

मुकदमे की फाइल दबाती कचहरी,
हमेशा नया गुल खिलाती कहचरी,
कचहरी का पानी ज़हर से भरा है,
कचहरी के नल पर मुवक्किल मरा है।

कचहरी का पानी कचहरी का दाना,
तुम्हें लग न जाए तू बचना-बचाना,
भले और कोई मुसीबत बुलाना,
कचहरी की नौबत कभी घर न लाना।

कभी भूलकर भी न आंखें उठाना,
ना आंखें उठाना न गर्दन फंसाना,
जहां पांडवों को नरक है कचहरी,
वहीं कौरवों को सरग है कचहरी।

राष्ट्रभक्त अपमानित होते, आतंकी पाते सम्मान।
वोट-बैंक की राजनीति से, खंडित हुआ देश का मान।।
–राम नारायण त्रिपाठी 'पर्यटक'

श्री राजेन्द्र 'राजन' का जन्म 9 अगस्त, 1952 को एलम (मुजफ्फरनगर, उ. प्र.) में हुआ था। उनका एक कविता-संकलन 'पतझर-पतझर सावन सावन' प्रकाशित है। सम्प्रति वे स्टार पेपर मिल्स लि., सहारनपुर में सोशल वर्क्स (कल्याण विभाग) में अधिकारी हैं।

पीयूष-घटों का आमन्त्रण

राजेन्द्र 'राजन'

कितनी बार कहा तुमसे मत केश बिखेरो कांधों पर
अपराध हवाओं का होगा बदनाम मुझे कर जाएंगी
पावन अधरों को छू-छूकर
सांसें चन्दन बन जाती हैं
आंखें झुककर गुमसुम-गुमसुम
जाने क्या-क्या कह जाती हैं
जब मैं कहीं अकेले में तुमको बोलूं तो मत आना
अपराध बहारों का होगा, बदनाम मुझे कर जाएंगी
तेरे माथे को छू-छूकर
हाथों की रेखा भी बदली
फूलों-से चेहरे पर अनगिन
संयम की घोर शिला पिघली
तन के ताले मत खोलो इक अंगड़ाई की चाबी से
अपराध अदाओं का होगा, बदनाम मुझे कर जाएंगी
पीयूष-घटों का आमन्त्रण
मन को कुछ कम, तन को ज्यादा
चंदा-सूरज ने धरती को
ज्यों बांट लिया आधा-आधा
जब-जब खिसके हिम श्रृंगों से आंचल तो मुझको मत देखो
अपराध निगाहों का होगा, बदनाम मुझे कर जाएंगी
अहसासों का यह सफर कहीं
चलते-चलते रुक जाता है
इक अगन-चक्र गतिमय होता
सारा संयम चुक जाता है
यह पूर्णतुष्टि है मृत्यु सरिस मांगो मत मुझको बार-बार
अपराध पुकारों का होगा, बदनाम मुझे कर जाएंगी।

दर्पण में आंखें बनी, दीवारों में कान।
चूड़ी में बजने लगी, अधरों की मुस्कान।।
–निदा फाजली

कोकिलकंठी **डॉ. सुमन दुबे** लखनऊ निवासिनी हैं। आप गीत लिखने में निपुण हैं और अपना अनूठी प्रस्तुति से मंच पर समा बांध देती हैं। 'दुनिया जादू का पिटारा' उनकी प्रशंसित रचना है। उनकी दृष्टि में दुनिया एक जादू का पिटारा है जिसमें अनेक रहस्य छिपे हुए हैं, जो समय-समय पर उजागर होकर हमको अचम्भित करते रहते हैं।

दुनिया जादू का पिटारा

डॉ. सुमन दुबे

अपनी धुन में गाता जाए
गली-गली बंजारा
दुनिया जादू का पिटारा
रे दुनिया! जादू का पिटारा।

अपनी जगह खड़ा है सूरज
लगता है कि चलता है
दुनिया वालों की नज़रों में
चांद भी घटता-बढ़ता है
डोल रही है धरती लेकिन
रुका लगे जग सारा
दुनिया जादू का पिटारा
रे दुनिया! जादू का पिटारा।

कहीं धूप है कहीं छांव है
होती है बरसात कहीं
कहीं अंधेरा कहीं उजाला
कहीं पे दिन और रात कहीं
चक्कर में इन्सान पड़ा है
देख के चक्कर सारा
दुनिया जादू का पिटारा
रे दुनिया! जादू का पिटारा।

कहीं जमीं खोदो तो पानी
कहीं जमीं खोदो पेट्रोल
कहीं पे सोना-चांदी निकले
देख सुमन है डांवाडोल
नदी का पानी मीठा लागे
और सागर का खारा
दुनिया जादू का पिटारा
रे दुनिया! जादू का पिटारा।

ऐसे भी हैं पेड़ कि जिनके
तन से खून निकलता है
काटो तो ऐसे रोते हैं
जैसे बच्चा रोता है
इस दुनिया के बारे में
मन सोच-सोच के हारा
दुनिया जादू का पिटारा
रे दुनिया! जादू का पिटारा।

सूफी-संत चले गये सब जंगल की ओर।
मन्दिर-मस्ज़िद से मिले रंग-बिरंगे चोर।।
—अंसार कंबरी

दिल्ली निवासी **राजेश 'चेतन'** मंचों पर एक लम्बे अर्से से सक्रिय हैं। उन्होंने विदेशों में भी काव्य-पाठ किया है। हमारा राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा भारत की आन-बान-शान है, इससे भारत की एक विशिष्ट पहचान है। 'तिरंगा' नामक कविता में चेतन जी ने प्रतीकों के माध्यम से राष्ट्रीय ध्वज के अनेक रूपों को प्रस्तुत किया है।

तिरंगा

राजेश 'चेतन'

ये तिरंगा, ये तिरंगा, ये हमारी शान है
विश्व भर में भारती की ये अमिट पहचान है।
ये तिरंगा हाथ में ले, पग निरन्तर ही बढ़े
ये तिरंगा हाथ में ले दुश्मनों से हम लड़े
ये तिरंगा दिल की धड़कन, यह हमारी जान है।
ये तिरंगा विश्व का सबसे बड़ा जनतन्त्र है
ये तिरंगा वीरता का गूंजता इक मन्त्र है
ये तिरंगा वन्दना है, भारती का मान है।
ये तिरंगा विश्व-जन को सत्य का सन्देश है
ये तिरंगा कह रहा है–अमर भारत देश है
ये तिरंगा इस धरा पर शान्ति का सन्धान है।
इसके रेशों में बुना बलिदानियों का नाम है
ये बनारस की सुबह है, ये अवध की शाम है
ये तिरंगा ही हमारे भाग्य का भगवान है।
ये कभी मंदिर कभी ये गुरुओं का द्वारा लगे
चर्च का गुम्बद कभी मस्जिद का मीनारा लगे
ये तिरंगा धर्म की हर राह का सम्मान है
ये तिरंगा बाईबिल है भागवत का श्लोक है
ये तिरंगा आयत-ए-कुरआन का आलोक है
ये तिरंगा वेद की पावन ऋचा का ज्ञान है।
ये तिरंगा स्वर्ग से सुन्दर धरा कश्मीर है
ये तिरंगा झूमता कन्याकुमारी नीर है
ये तिरंगा मां के होंठों की मधुर मुस्कान है।
ये तिरंगा देव-नदियों का त्रिवेणी रूप है
ये तिरंगा सूर्य की पहली किरण की धूप है
ये तिरंगा भव्य हिमगिरि का अमर वरदान है।
ये तिरंगा अन्देमानी काला पानी जेल है
ये तिरंगा शान्ति औ' क्रान्ति का अनुपम मेल है
वीर सावरकर का ये इक साधना-संगान है।
ये तिरंगा शहीदों का जलियांवाला बाग है
ये तिरंगा क्रांन्ति वाली पुण्य-पावन आग है
क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर का ये स्वाभिमान है।
कृष्ण की ये नीति जैसा, राम का वनवास है
आद्यशंकर के जतन-सा बुद्ध का संन्यास है
महावीर स्वरूप ध्वज ये अहिंसा का गान है।
रंग केसरिया बताता–वीरता ही कर्म है
श्वेत रंग ये कह रहा है–शांति ही धर्म है
हरे रंग के स्नेह से यह मिट्टी ही धनवान है।
ऋषि दयानन्द के ये सत्य का प्रकाश है
महाकवि तुलसी के पूज्य राम का विश्वास है
ये तिरंगा वीर अर्जुन और ये हनुमान है।

प्रेम ना शब्दों में नपे, तुला सकै ना तोल।
ओछो कोश कुबेर को, प्रेम-भाव अनमोल।।
–सत्यनारायण सिंह

'शायरों' की महिफल' में हम दस शायरों के शेर प्रस्तुत कर रहे हैं, जो अपनी भाव-सम्प्रेषणीयता के कारण जहां एक ओर गुदगुदाएंगे, वहीं आपको कुछ सोचने पर भी मज़बूर करेंगे। तो मजा लीजिए कतिपय शायरों के अनमोल शेरों का।

शायरों की महफिल

ये दिलबरी, ये नाज, ये अन्दाज़, ये जमाल
इन्सां न करे अगर तेरी चाह, क्या करे।

–अख्तर

फिर अदालत में गवाहों ने दिये झूठे बयां
और फिर से फैसला क़ातिल के हक़ में हो गया।

–नामालूम

हाथ कांटों से कर लिये ज़ख्मी
फूल बालों में इक सजाने को।

–अदा जाफ़री

आज तक उसकी मुहब्बत का नशा तारी है
फूल बाक़ी नहीं, खुशबू का सफ़र जारी है।

–शहज़ाद अहमद

पीता हूं इस ग़रज से कि जीना है चार दिन
मरने के इन्तज़ार ने पीना सिखा दिया।

–नरेश कुमार 'शाद'

मुश्किल फ़न है ग़ज़लों की रोटी खाना
बहरों को भी शे'र सुनाना पड़ता है।

–डॉ. राहत इन्दौरी

सुना है ग़ैर की महफिल में तुम न जाओगे
कहो तो आज सजा लूं गरीबखाने को।

–क़मर जलालवी

तपता हुआ दिन, जलती हुई रात मिली है
सावन की घटाओं से ये कैसी सौगात मिली है।

–डॉ. साग़र आज़मी

बच्चों के छोटे हाथों को चांद-सितारे छूने दो
चार किताबें पढ़के वो भी हम जैसे हो जायेंगे।

–निदा फ़ाजली

दिल में चुभ जायेंगे जब अपनी जुबां खोलेंगे
हम भी अब शहर में कांटों की दुकां खोलेंगे।

–क़ैसर

कुत्ता रोया फूटकर यह कैसा जंजाल।
सेवा नमक हराम की करता नमक हलाल।।

–श्यामल सुमन

हास्य कवि **प्रवीण शुक्ल** का जन्म 7 जून, 1970 को पिलखुवा (ग़ाज़ियाबाद, उ. प्र.) में हुआ था। पेशे से अध्यापक श्री शुक्ल के 'स्वर अहसासों के', 'कहां वे कहां ये' और 'हंसते-हंसाते रहो' कविता-संकलन प्रकाशित हैं। विभिन्न काव्य मंचों और चैनलों पर उनकी कविताओं को सुना जा सकता है।

बताओ, हम क्या करें?

प्रवीण शुक्ल

इस देश में जिएं या मरें
बताओं हम क्या करें?
मंहगाई हमें रोज-रोज मारे चांटा
दस रुपये का किलो हो गया है आटा
अब तक ना सिला पुराना फटा कुरता
बैंगन के भाव सुनते ही बना भुरता
रोटी खाएं या घास चरें
बताओ हम क्या करें?
पूजाघर में चले हैं चाकू, छुरे, डन्डे
वेश को बदल रहे जत्थी, मुल्ला, पन्डे
खुदा, यीशू, वाहे गुरु पे लगाया दाग़ है
भेदभाव, ऊंच नीच की लगा दी आग है
आदमी से भगवान भी डरें
बताओ हम क्या करें?
नेता मेरे देश के हैं अपने जुगाड़ में
इनकी बला से पूरा देश जाए भाड़ में
नोट भरने को मन्त्री ने बोरा ले लिया
विदेशों से भीख के लिए कटोरा ले लिया
भीख मांगकर तिजोरियां भरें
बताओ हम क्या करें?

हरियाले-से हो गये स्मृतियों के गांव।
नयनों में बस बस रहे मेहंदी वाले पांव।।
–शिवनारायण सिंह

मेरठ कॉलेज, मेरठ के विधि विभाग में वरिष्ठ प्रवक्ता **हरिओम पंवार** हिन्दी काव्य-मंच के हिमालय हैं। देश-विदेश में ओज के प्रखर हस्ताक्षर के रूप में चर्चित पंवार जी की कविताएं सुनकर श्रोतागण आंदोलित हो जाते हैं और उनमें राष्ट्र-प्रेम हिलोरें मारने लगता है। 'परमाणु विस्फोट' उनकी समसामयिक रचना है।

परमाणु विस्फोट

डॉ. हरिओम पंवार

सीमा ने मस्तक मांगे हैं,
घाटी मांग रही है खून।
भारत माता के दामन पर,
अंकित गैरों के नाखून।
चाबुक लेकर धमकाता है,
कोई सी.टी.बी.टी. कानून।
और हमारे दाएं-बाएं,
ऊपर एटम तना जुनून।
और बढ़े न गिनती आगे,
भारत मां पर चोटों की।
इस कारण आवश्यकता थी,
परमाणु-विस्फोटों की।
इन विस्फोटों की गर्भ-कथा
सीता की अग्नि-परीक्षा है।
दुनिया में अपनी ताकत के,
बल पर जीने की शिक्षा है।
इन विस्फोटों की मिट्टी तो,
मां के माथे का चन्दन है।
इनमें भूषण की शैली का,
नूतन युग का अभिनन्दन है।
इन विस्फोटों में हिम्मत की,
हुंकार सुनाई देती है।
झांसी वाली तलवारों की,
झंकार सुनाई देती है।
गूंजों में लाल बहादुर की,
ललकार सुनाई देती है।
इनमें गांडीव धनुष वाली,
टंकार सुनाई देती है।
ये आज़ादी की रक्षा,
तैयारी के चन्द पहाड़े हैं।
ये जग के तानाशाहों के,
कानों के पास नगाड़े हैं।
ये इन्द्रधनुष हैं धरती के,
ये परचम है विश्वासों के।
ये आशा के उद्‌बोधन हैं,
ये स्मारक इतिहासों के।
ये उम्मीदों के स्वर्ण-कलश,
ये रक्षा-कवच हिमालय के।
ये गूंज विदेशी रणभेदी,
ये शंख किसी देवालय के।
ये मन्दिर की पूजा-घंटी,
ये हैं आवाज़ अजानों की।
ये जय-जय घोष किसानों का,
ये जय-जय वीर जवानों की।
इन गूंजों में राणा सांगा के,
घावों का मरहम भी है।
भारत-भू की गंगा-जमुनी
तहज़ीबों का संगम भी है
ये धूम-धड़ाके आज़ादी की,
दुल्हन के आभूषण हैं।
ये धूल महावर-मेहंदी हैं,
ये गूंज खनकते कंगन हैं।
इन विस्फोटों की गूंजों में,
साहस का मौन समन्दर है।
सबकी धमकी का उत्तर है,
सी.टी.बी.टी. पर ठोकर है।
इन विस्फोटों से दुनिया के,
कोलाहल में सन्नाटा है।
जग में दादागिरी करने वाले,
गालों पर चांटा है।
इन गूंजों में डमरू वाले,
शिवजी का तांडव नर्तन है।
इनमें गीता गाने वाले,
माधव का चक्र सुदर्शन है
इन गूंजों में आज़ादी की,

रक्षा की भीष्म-प्रतिज्ञा है।
ये आज़ादी की गूंज,
हमारे स्वाभिमान की संज्ञा है।
इन विस्फोटों में छिपी हुई हैं,
शक्ति-भवन की बुनियादें।
हैं इनमें चौबीस साल पुरानी,
इन्दिरा गांधी की यादें।
'62 के चीनी हमले ने,
भारत की आंखें खोली थीं।
जो भाई-भाई गाते थे,
उनके हाथों में गोली थी।
ये पूरी दुनिया दर्शक थी,
गांधी का देश अकेला था।
हमने दिल पर पत्थर रखकर,
गद्दारी का ग़म झेला था।
जो सदमा चाचा नेहरू के,
जीवन को ही लील गया।
ये हमला पंचशील वाले,
अरमानों का दिल छील गया।
जिनके बाजू में ताकत है,
आज़ादी उनकी होती है।
दुर्बलता के दामन में तो,
केवल लाचारी सोती है।
जो भारत ताकतवर होता तो,
चीन नहीं लड़ सकता था।
मानसरोवर पर पीकिंग का,
झंडा नहीं गड़ सकता था।
दुनिया में ताकत के बल पर,
रक्षित मानवता होती है।
मज़बूरी पली अहिंसा की,
बेटी कायरता होती है।
शबनम की बूंदों से किसने,
धरती को गलते देखा है।
पूनम के चन्दा से किसने,
पर्वत को जलते देखा है।
कागज का जलयान कभी,
सागर के पार नहीं जाता।
जब दूर पपीहा गाता है,
कोलाहल हार नहीं जाता।
सांसों की गर्मी से गल जाय,
हिमालय, क्या ये सम्भव है?
कोयल की कूकों से,
बादल की गर्जन डरे, असम्भव है।
दो-चार पंखुड़ी फूलों की,
अम्बर का भार नहीं होतीं।
मेहंदी, कंगन, नूपुर, रोली,
रण में हथियार नहीं होतीं।
चरखों से नहीं लड़ा जाता,
सीमा पर शोलों के आगे।
रामायण नहीं पढ़ी जाती,
तोपों के गोलों के आगे।
धरती के घोर कुहासे को,
केवल सूरज हर सकता है।
एटम बम से रक्षा केवल,
एटम बम ही कर सकता है।
रक्त रंगी है बलिदानों की,
कण-कण मिट्टी हिन्दुस्तानी।
घर-घर में गायी जाती,
हाड़ी रानी की कुर्बानी।
कुर्बानी की याद, कथा है–
बप्पा रावल राजस्थानी।
पूजनीय हैं आल्हा-ऊदल,
गोरा-बादल काला पानी।
हमने कभी सिकन्दर वाले,
रथ को वापस मोड़ दिया था।
हमने सोलह बार पकड़ कर,
गौरी जिन्दा छोड़ दिया था।
यहां शिवाजी ने मान
दिया था गौहर को भी।
कूद पड़ी अंगारों में,
पद्मिनी जौहर को भी।
हमने सागर के पानी के,
ऊपर पत्थर तैराये थे।
हम गर्दन में फांसी वाले,
फन्दे लेकर मुसकाये थे।
सीताजी के सत के आगे,
धरती को फटते देखा था।
रामधनुष के सत के आगे,
सागर को हटते देखा था।
हम इतिहास बदलने निकले,

तो भूगोल बदल जाता था।
औ हमारा वंशी वाला,
नागों के फन पर गाता था।
लेकिन जाने या अनजाने,
कर डाली कुछ भूलें भारी।
इन भूलों के परिणामों से,
आज़ादी भी हमने हारी।
लेकिन गांधी और शहीदों की,
कुर्बानी रंग लायी है।
सन् '47 में आज़ादी
लोहू में सनकर आयी है।
लेकिन आजादी की रक्षा,
ताकत के बिना अधूरी है।
इसीलिए हमारे हाथों में,
एटम बम बहुत जरूरी है।
एटम के अनगिनत शोले हैं,
जिन-जिन देशों की मुट्ठी में।
दुनिया को शिक्षा देते हैं,
सी.टी.बी.टी. की घुट्टी में।
सी.टी.बी.टी. के माने हैं,
कोई अपना शीश उठा न ले।
जैसे बम उनके घर में हैं,
ऐसे कोई और जुटा न ले।
ये अच्छी दादागिरी है,
वे दुनिया को धमकायेंगे।
वे खुद ही आग लगायेंगे,
वे खुद ही आग बुझायेंगे।
क्या मलय पवन के झोंके भी,
प्रतिबन्धों से झुक जाते हैं?
क्या कोई ज्वालामुखी कभी,
प्रतिबन्धों से रुक जाते हैं?

मुट्ठी भर ईराक जगत के,
प्रतिबन्धों से लड़ सकता है।
दुनिया के दादा के आगे,
सीना ताने अड़ सकता है।
उसको ही जीने का हक है,
जो मरने से नहीं डरेगा।
एक अरब का मेरा भारत,
प्रतिबन्धों से नहीं झुकेगा।
हमने विस्फोट किये जिससे,
भारत एटम की ताकत हो।
जो करना था, वो कर गुजरे,
जो ना चाहे, ना सहमत हो।
हमने विस्फोट किये जिससे,
कल दिल्ली ना लाचार रहे।
वो ईंटों का उत्तर, पत्थर से,
देने को तैयार रहे।
जिससे भारत के आंगन में,
अंगारा नाच नहीं पाये।
जिससे मीराबाई के छन्दों को,
कोई आंच नहीं आये।
जिससे पूजा के दीप बनें,
सब परवाने आज़ादी के।
दो हाथ मदर टेरेसा के,
दो पांव महात्मा गांधी के।
हमने विस्फोट किये जिससे,
दुनिया में इक पहचान रहे।
आज़ादी का अरमान रहे,
अपने गौरव का ध्यान रहे।
जिससे भारत में पैदा होने का,
हमको अभिमान रहे।
जब तक अम्बर में सूरज है,
धरती पर हिन्दुस्तान रहे।

रहिमन धागा प्रेम का मत तोरेउ चटाकाय।
टूटे से फिरि ना जुड़ै, जुड़ै गांठि परि जाय।।
—रहीमदास

कानपुर के मूल निवासी गीतकार, ग़ज़लकार और नाट्य अभिनेता **डॉ. अशोक मधुप** बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। वे हिन्दी काव्य-मंच से भी जुड़े हैं। प्रस्तुत है, उनका एक प्रेम गीत।

प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर

डॉ. अशोक मधुप

अधरों पर मुस्कान लिये प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर।
जब उमर खड़ी हो यौवन के दोराहे पर,
देख तुम्हें सिन्दूर मिलन को तड़प उठे।
गुनगुना उठे पाजेब पांव के मन-ही-मन,
कंगन विवाह का देख तुम्हें जब मचल उठे।
सपनों का संसार लिये प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर।
हो जाये व्याकुल जब गजरों वाला बेला,
जब रूप-सुन्दरी तुम्हें देखकर शरमाये।
सावन की वंशी अधरों पर छेड़े सरगम,
अलिदल फूलों के चुम्बन को जब ललचाये।
नयनों में मधुमास लिये प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर।
अनुभूति नयी हो और मिले स्पर्श नया,
मन व्याकुल हो जब एक नये आलिंगन को।
सम्मोहन और सृजन की मन में चाह लिये,
भावना विकल हो शहनाई के गुंजन को।
मन में नव उल्लास लिये प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर।
खिल उठें अधर जब कमल पखुंड़ी के समान,
रतनारे नयनों का काजल ले अंगड़ाई।
खिल उठे महावर और विहंस जाये मेंहंदी,
मचले आंचल के बन्धन में जब तरुणाई।
कर में स्वागत-दीप लिये प्रिय! मिल जाना तुम द्वारे पर।

स्कूलों को लग गया, जाने कैसा शाप।
शिक्षा मंत्री बन गया, एक अंगूठा छाप।।
–डॉ. सुनील जोगी

हिन्दी काव्य-मंच के भीष्म पितामह **श्री गोपालदास नीरज** का जन्म इटावा जनपद में हुआ था। गीत और ग़ज़ल लेखन में सिद्धहस्त नीरज जी के अनेक काव्य-संग्रह प्रकाशित हैं। उन्होंने फिल्मों में भी गीत लिखे हैं। 'जीवन नहीं मरा करता है' उनकी एक चर्चित रचना है, जिसमें उन्होंने जीवन की निरन्तरता पर प्रकाश डालते हुए उसे निराशा के घटाटोप में आशा की किरण बताया है। सम्पर्क–मैरिस रोड, अलीगढ़ (उ. प्र.)

जीवन नहीं मरा करता है

गोपालदास 'नीरज'

छुप-छुप अश्रु बहाने वालो, मोती व्यर्थ लुटाने वालो
कुछ सपनों के मर जाने से, जीवन नहीं मरा करता है
सपना क्या है; नयन-सेज पर सोया हुआ आंख का पानी
और टूटना है उसका; ज्यों जागे कच्ची नींद जवानी
गीली उमर मनाने वालो, डूबे बिना नहाने वालो
कुछ पानी के बह जाने से सावन नहीं मरा करता है
कुछ भी मिटता नहीं यहां पर, केवल जिल्द बदलती पोथी
जैसे रात उतार चांदनी पहने सुबह धूप की धोती
चाल बदलकर जाने वालो, वस्त्र बदलकर आने वालो
चन्द खिलौनों के खोने से, बचपन नहीं मरा करता है
माला बिखर गई तो क्या है, खुद ही हल हो गई समस्या
आंसू गर नीलाम हुए तो; समझो पूरी हुई तपस्या
रूठे दिवस बुलाने वालो, फटी कमीज़ सिलाने वालो
पतझड़ लाख करे कोशिश, पर उपवन नहीं मरा करता है
लाखों बार गगरियां फूटीं, शिकन न पर आई पनघट पर
सौ-सौ बार कश्तियां डूबीं, चहल-पहल वो ही है तट पर
तम की उमर बढ़ाने वालो, सब पर धूल उड़ाने वालो
कुछ मुखड़ों की नाराजी से, दर्पण नहीं मरा करता है।

पानी-पानी ही रहा, जिनके चारों ओर।
प्यास-प्यास चिल्ला, रहे वही लोग पुरजोर।।
–हरेराम समीप

राजस्थान में जन्मे **अनूप भार्गव** ने पिलानी से इंजीनियरिंग स्नातक व आई.आई.टी, दिल्ली से स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की है। वर्तमान में वे अमेरिका के न्यूजर्सी राज्य में स्वतंत्र कम्प्यूटर सलाहकार के रूप में कार्यरत हैं।

अनूप भार्गव (अमेरिका)

रिश्ते

रिश्तों को सीमाओं में नहीं बांधा करते
उन्हें झूठी परिभाषाओं में नहीं ढाला करते

उड़ने दो इन्हें उन्मुक्त पंछियों की तरह
बहती हुई नदी की तरह

तलाश करने दो इन्हें अपनी सीमाएं
खुद ही ढूंढ़ लेंगे अपनी उपमाएं

होने दो वही जो क्षण कहे
सीमा वही हो जो मन कहे।

मुक्तक

प्रणय की प्रेरणा तुम हो
विरह की वेदना तुम हो
निगाहों में तुम्हीं तुम हो
समय की चेतना तुम हो

तृप्ति का अहसास तुम हो
बिन बुझी-सी प्यास तुम हो
मौत का कारण बनोगी
ज़िन्दगी की आस तुम हो

सुख-दुःख की हर आशा तुम हो
चुम्बन की अभिलाषा तुम हो
मौत के आगे जीवन क्या हो
जीवन की परिभाषा तुम हो

सपनों का अध्याय तुम्हीं हो
फूलों का पर्याय तुम्हीं हो
एक पंक्ति में अगर कहूं तो
जीवन का अभिप्राय तुम्हीं हो।

बूढ़ी मां-सी सूखकर नदी हुई बेहाल।
होंठ किनारे पर जमे तपते हुए सवाल।।
–सुरेन्द्र सुकुमार

पत्थरों के इस शहर में

जय वर्मा (ग्रेट ब्रिटेन)

जिवाना, मेरठ (उ. प्र.) में जन्मीं **सुश्री जय वर्मा**, यू.के. के नॉटिंघम ट्रैंट विश्वविद्यालय से प्रबन्धन में पोस्ट ग्रेजुएट हैं। सम्प्रति नॉटिंघम में हेल्थ सर्विस में प्रैक्टिस। मुख्य प्रबंधक पद पर कार्यरत। हिन्दी कविता के लिए नॉटिंघमशायर के लार्ड मेयर द्वारा सम्मानित।

पत्थरों के इस शहर में
हम घर ढूंढ़ें कैसे?
चिने हैं महल यादों के
आज़ादी का शहर ढूंढ़े कैसे?
उम्मीदों के दीये जला भी लें
अंधेरों में रंग भरें कैसे?
विधाता ने लिख दिया तख़्ती पर
उसका रंग छुड़ाएं कैसे?
मुखौटों के पीछे छिपे चेहरे
इन्सानों को पहचानें कैसे?
चट्टानों से टकराकर गूंजती हैं आवाज़ें
दबे पांव चलें कैसे?
चलकर दो कदम आगे
हट जाते हैं एक कदम पीछे
राहें हैं इतनी मुश्किल
मंज़िल पर पहुंचें कैसे?
अंधेरों में रोशनी
और उजालों में हमने अंधेरे देखे
मिलते ही लोग कर लेते हैं आंखें चार
तो पहचानें कैसे?
आंचल में भर ली खुशियां और ग़म
चीर हम बढ़ाएं कैसे?
हंसी के पीछे छुपी है एक मूरत
मुस्कराहट हम लाएं कैसे?

हाइकू

13 फरवरी, 1969 को सुल्तानपुर (उ. प्र.) के जाफरपुर गांव में जनमे **कमलेश भट्ट 'कमल'** ने जापानी छन्द हाइकू पर बहुत काम किया है। 'शंख सीपी रेत पानी' उनका ग़ज़ल संग्रह है। हाइकू (1989 व 1999) दो हाइकू संकलनों का सम्पादन किया है। आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं।

कमलेश भट्ट 'कमल'

देख लेती है
जीवन के सपने
अंधी आंखें भी

धूल ढंकेगी
पत्तों की हरीतिमा
कितने दिन

आखिरी युद्ध
लड़ना है अकेली
मौत के साथ

कौन मानेगा
सबसे कठिन है
सरल होना

पल को सही
तोड़ा तो जुगनू ने
रात का अहं

तुम्हीं बताओ
खुदा व भ्रष्टाचार
कहां नहीं है

छांह की नहीं
ऊंचाई की होड़ है
यूक्लिप्टसों में

समुद्र नहीं
परछाईं खुद की
लांघो तो जानें।

8 नवम्बर, 1925 को लखनऊ में जन्मे **कृष्ण बिहारी 'नूर'** का पूरा नाम कृष्ण बिहारी श्रीवास्तव है। वे उर्दू-हिन्दी कविता के सर्वाधिक चर्चित ग़ज़लगो हैं। उनको पढ़ना-सुनना एक सुकूनदेह अनुभव होता है। 'समन्दर मेरी तलाश में है' उनकी हिन्दी ग़ज़लों का संकलन है। वे आज हमारे बीच नहीं हैं। श्रद्धांजलि स्वरुप प्रस्तुत है उनकी एक ग़ज़ल

ग़ज़ल

कृष्ण बिहारी 'नूर'

तेज़ हो जाता है ख़ुशबू का सफ़र शाम के बाद;
फूल शहरों में खिलते हैं, मगर शाम के बाद।
उससे दरियाफ़्त न करना कभी दिन के हालात;
सुबह का भूला जो लौट आया हो गर शाम के बाद।
दिन तेरे हिज्र में कट जाता है जैसे-तैसे;
मुझसे रहती है ख़फ़ा मेरी नज़र शाम के बाद।
क़द से बढ़ जाए जो साया तो बुरा लगता है
अपना सूरज वो उठा लेता है हर शाम के बाद।
तुम न कर पाओगे अंदाज़ा तबाही का मेरी;
तुमने देखा ही नहीं कोई खंडर शाम के बाद।
मेरे बारे में कोई कुछ भी कहे सब मंज़ूर;
मुझको रहती ही नहीं अपनी ख़बर शाम के बाद।
ये ही मिलने का समय भी है बिछड़ने का भी;
मुझको लगता है बहुत अपने से डर शाम के बाद।
तीरगी हो तो वजूद उसका चमकता है बहुत;
ढूंढ़ तो लूंगा उसे 'नूर' मगर शाम के बाद।

देखा! तेरे शहर को, भीड़ भीड़-ही-भीड़।
तिनके-ही-तिनके मिले, मिला न कोई नीड़।।
—नरेश शांडिल्य

नवोदित कवि **सलिल सागर** कानपुर के मूल निवासी हैं। आप तुकान्त कविताएं लिखते हैं। इनकी रचनाएं सहज-सरल शैली में निबद्ध होती हैं। वर्तमान में वे ग़ाज़ियाबाद के एक प्राइवेट संस्थान में कार्यरत हैं। 'मां के जैसा प्यार' उनकी मर्मस्पर्शी रचना है, जिसमें मां को अतुलनीय बताया गया है।

मां के जैसा प्यार

सलिल सागर

माता-शिशु का प्यार देख पत्थर भी पिघल जाता।
मां के जैसा प्यार जगत में कहीं न मिल पाता।।

नौ माह गर्भवास करवा कर स्तनपान कराती।
कोई भी मौसम हो शिशु को सीने से लिपटाती।।
निज ममता में नन्हे शिशु को अपना लहू पिलाती।
स्वयं लेटती गीले में, सूखे में उसे सुलाती।
शिशु के आंसू देख जननि का हृदय निकल आता।
मां के जैसा प्यार जगत में कहीं न मिल पाता।।

अपने सुख की तिलांजलि दे शिशु को सुख देती।
सहकर कष्ट हज़ारों शिशु में सपने बो देती।।
भेदभाव वह ना करती–बेटा हो या बेटी।
उन्नति-पथ पर बढ़ता जाए–ये असीस देती।।
उसके त्याग-तपस्या से नन्हा शिशु पल पाता।
मां के जैसा प्यार जगत में कहीं न मिल पाता।।

मां से चन्दामामा मिलता तारों संग खिलता।
मां के आंचल के आगे अम्बर बौना लगता।।
मां की ममता पाने को भगवान तरस जाते।
मां की ममता रोने से वो मेघ बरस जाते।।
माता से ही एक पिता का गुलशन खिल पाता।
मां के जैसा प्यार जगत में कहीं न मिल पाता।।

साल नया गुलज़ार हो, मिटें सभी के दर्द।
मेहनत से हम झाड़ दें, गए साल की गर्द।।
–पूर्णिमा बर्मन

रस की फुहार

देवमणि पांडेय

4 जून, 1958 को उ. प्र. के सुल्तानपुर शहर में जन्मे **देवमणि पांडेय** की रचनाएं प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित व दूरदर्शन पर प्रसारित हुई हैं। उनके दो कविता संकलन 'दिल की बातें' व 'खुशबू की लकीरें' प्रकाशित हैं। वे एक पत्रकार भी हैं और इन दिनों मुंबई में रहते हैं।

नज़रों का प्यार बन कर, दिल का क़रार बनकर
इस दिल में समाओ तुम, रस की फुहार बनकर।
जी चाहे मैं आज तेरे
दिल के क़रीब आ जाऊं
झील-सी गहरी आंखों में
मैं डूब के खुद को पाऊं।
तन-मन को जगाओ तुम दिलकश सितार बनकर
इस दिल में समाओ तुम रस की फुहार बनकर।
इन नयनों के दरपन में
हरपल तेरा ही चेहरा है
तेरी यादों का इस दिल की
हर धड़कन पर पहरा है
सांसें महकाओ तुम, महकी बहार बनकर
इस दिल में समाओ, तुम रस की फुहार बनकर।
तुम हो चाहत तुम्ही ज़िंदगी
आज ये मैंने माना
मेरे दिल मे प्यार जगाकर
दूर न तुम हो जाना।
मेरे ख़्वाब सजाओ तुम सदियों का प्यार बनकर
इस दिल में समाओ तुम रस की फुहार बनकर।

फुहारा

उत्तर बताएं, पुरस्कार पाएं

प्रतियोगिता के नियम व शर्तें :

1. प्रतियोगिता में कुल दस प्रश्न पूछे जाएंगे, जिनके उत्तर पाठकों को देने हैं।
2. जिन पाठकों के प्रश्न सही होंगे, ऐसे पांच पाठकों को पांच-पांच सौ रुपये मूल्य की पुस्तकें डाक द्वारा प्रेषित की जाएंगी।
3. प्रविष्टियां साधारण डाक से ही स्वीकृत की जाएंगी।
4. पांच से अधिक प्रविष्टियां सही पाई जाने पर लॉटरी द्वारा निर्णय किया जाएगा।
5. सफल प्रतियोगियों के नाम पत्रिका के अगले अंक में प्रकाशित किए जाएंगे।

प्रश्न :

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म कहां हुआ था?
2. किस कवि का जन्म-शताब्दी वर्ष सन् 2008 में मनाया गया था?
3. उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान कहां है? वर्तमान में इसके कार्यकारी अध्यक्ष कौन हैं?
4. 'चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में' कौन-सा अलंकार है?
5. चन्दरवरदाई, हिन्दी काव्य इतिहास के किस काल में कवि हैं?
6. 'सरोज स्मृति' नामक रचना किस कवि ने लिखी थी।
7. दोहा में कितनी मात्राएं होती हैं?
8. वर्ष 2007 का ज्ञानपीठ पुरस्कार किस कवि को मिला था?
9. 'सतसई' का क्या अर्थ होता है? बिहारी रीति बद्ध कवि हैं या रीति मुक्त?
10. **पत्रिका में से खोजकर उत्तर दीजिए :**

'नारद जी खबर लाए हैं' नामक स्तम्भ के लेखक का नाम बताइए?

साक्षात्कार

'हास्य शरीर है और व्यंग्य उसका प्राण है'

–श्री गोपाल प्रसाद व्यास

प्रख्यात व्यंग्यकार, हास्य कवि एवं हिन्दी सेवी श्री गोपाल व्यास का जन्म 13 फरवरी, 1915 को परासौली, गोवर्धन (मथुरा), उ. प्र. में हुआ। साहित्य के प्रति लगाव ने श्री व्यास को किशोरावस्था में ही लेखन के प्रति आकर्षित किया। बढ़ती उम्र के साथ-साथ वे साहित्य सृजन में गतिमान रहे। विशारद, प्रभाकर और साहित्य रत्न की शिक्षा प्राप्त करने वाले श्री व्यास मूलतः ब्रजभाषा के कवि हैं। इसके अलावा उन्होंने साहित्य की अन्य विधाओं में अपनी लेखनी चलाकर सम्पूर्ण हिन्दी जगत में एक सुगंधमय वातावरण तैयार किया है। अजी सुनो, पत्नी को परमेश्वर मानो, हास्यरस के हल्ले, बूढ़ों ने किया कमाल यार, मैंने कहा, कुछ सच-कुछ झूठ (व्यंग्य निबंध), हमारे राष्ट्रपिता (जीवनियां), हास्य महासागर (आत्मकथा), अरबों के देश में 'यात्रा-संस्मरण' के अलावा उनके कई अन्य सम्पादित ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। लाल किले के राष्ट्रीय कवि सम्मेलन और देशभर में होली के अवसर पर 'महामूर्ख' सम्मेलनों के जन्मदाता और संचालक रह चुके श्री व्यास को। हिन्दी, अंग्रेजी के अलावा संस्कृत, गुजराती, मराठी, बंगला और राजस्थानी का ज्ञान था। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान श्री व्यास ने राष्ट्रप्रेम में अभिभूत होकर हस्तलिखित और साइक्लोस्टाइल कई लघु पत्रों एवं बुलेटिनों का भूमिगत प्रकाशन मथुरा, आगरा और इटावा से किया। पत्रकारिता के क्षेत्र में श्री व्यास दैनिक हिन्दुस्तान, नयी दिल्ली के सहायक-संपादक एवं दैनिक 'विकासशील भारत' में प्रधान संपादक रह चुके थे।

हिन्दी साहित्य में आपके अविस्मरणीय योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से अलंकृत किया गया। आपको हिन्दी अकादमी, दिल्ली का प्रथम साहित्यकार सम्मान पाने का गौरव प्राप्त है। आपको उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा राजर्षि पुरुषोत्तम टंडन स्वर्ण-पदक से विभूषित किया गया है। आपको बम्बई की व्यंग्य-विनोद की शीर्ष संस्था 'चकल्लस' द्वारा 'व्यंग्य विशारद' की उपाधि से अलंकृत किया गया तथा स्व. पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की स्मृति में प्रदान किये जाने वाले 'ठिठोली' पुरस्कार द्वारा 'हास्य रसावतार' की पदवी भी आपको प्रदान की गयी। आपको वृंदावन की 'ब्रज अकादमी' द्वारा ब्रज मंडल और ब्रज साहित्य के 'भीष्म पितामह' के संबोधन से सुशोभित किया गया है। कुछ साल पहले एक समारोह में आपको हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा अपने शिखर सम्मान 'शलाका सम्मान' से सम्मानित किया गया। आज व्यास जी हमारे बीच नहीं हैं। श्रद्धांजलि स्वरुप उनसे हुई डॉ. सुनील जोगी की बातचीत के प्रमुख अंश यहां प्रस्तुत हैं :

व्यास जी, आप हिन्दी कवियों में पुरोधा कवि रहे हैं। आज हिन्दी कवि-मंच के लोकप्रिय कवियों को साहित्य में कोई गरिमापूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हो पाता है। इसका प्रमुख कारण आप क्या मानते हैं?

इसके दो कारण हैं, पहला तो ये कि मंचीय कवियों को जो मंच से प्रशंसा और पारिश्रमिक मिलता है उससे वे संतुष्ट हो जाते हैं, उसको सिद्ध पीठ मानते हैं और उससे सिद्धि और प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिए मंचीय कविताएं लिखने लगते हैं। सोचते हैं यह आर्थिक योग है। हमारे समय में ऐसा नहीं था। कवि को एक कविता में दस-पांच रुपये मिल गए तो मिल गए, नहीं मिले तो नहीं मिले। कविता छप गई तो छप गई, लौट आई तो लौट आई। इसकी चिन्ता किये बगैर वह अपनी साहित्य साधना में रत रहता था। दूसरा यह है कि जो हमारे साहित्यकार समीक्षक लोग हैं। वे मंचीय कवियों के गुणों की ओर न देखकर उनके अवगुणों की ही तलाश करते रहते हैं। वे जानते हैं कि साहित्य का काम जनता की संवेदना को उजागर करना होता है और ये मंचीय कवि भाषा के साहित्य के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं। इस दृष्टि से वे इसके साहित्य का निरीक्षण नहीं करते बल्कि कहते हैं कि इनमें तो हल्कापन है और इन्होंने तो अपने नाम तक ऐसे रख लिए हैं कि नाम सुनकर ही लोग हंसने लगेंगे और जोकर ही तरह कोई दाढ़ी बढ़ा लेगा, कोई मूंछें लम्बी कर लेगा, कोई टोपी को अलग तरह से पहनता है, कोई पगड़ी या साफा बांध लेता है, कोई हुक्का पीने लगता है, कोई शनीचर बन जाता है और कोई फटीचर बन जाता है। तो ये इस तरह से उनमें शीलता का कोई नाम ही नहीं होता बल्कि अश्लीलता की तरफ उनका साहित्य जाता है। कविता न लिखकर के चुटकुलेबाजी करते हैं।

जिस समय आपने कविता में पदार्पण किया उस समय तो ऐसी स्थिति नहीं थी। मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानन्दन पंत यहां तक कि निराला और भी बड़े-बड़े नाम हैं, ये लोग वाचक परम्परा के थे अर्थात् हजारों श्रोताओं के बीच काव्य पाठ किया करते थे लेकिन ये स्थिति बाजार से जुड़ने के कारण पैदा हुई या मंच के कवियों ने साहित्य को पढ़ना ही छोड़ दिया। साहित्य से उनका कोई सम्पर्क ही न रहा।

बात ये है कि साहित्यकार साहित्य देखते थे, मंच उनकी जगह नहीं थी, परन्तु जब वे मंच पर आते थे तो व्यंग्य भी करते थे लेकिन

साहित्यिक गरिमाओं में करते थे। साहित्य के द्वारा वे जनता को प्रभावित किया करते थे। लेकिन धीरे-धीरे जनता में साहित्य की रुचि घटने लगी। अब किसी भी घर में पुस्तकों से लगाव कम हो गया है तो लोग साहित्यिक रचनाओं को मंच से कैसे जोड़ेंगे।

साहित्य में हास्य रस को प्रथम कोटि का नहीं माना जाता है। हास्य रसावतार होकर आप इस सन्दर्भ में क्या कहना चाहेंगे?

साहित्य में हास्य को प्रथम कोटि का स्वीकार नहीं किया गया, मैं इस बात को नहीं मानता। नव रसों में हास्य का एक प्रमुख स्थान है। जो आजकल का हास्य लिखा जा रहा है उसको तो शास्त्र में स्थान न दें तो कोई बुरा नहीं है। वैसे हमारे नाटकों में, समीक्षा में हास्य रस के अनेक भेद किये गये हैं और उसके उदाहरण भी प्रस्तुत किये गये हैं कि किस प्रकार हास्य को व्यंजित किया जाता है। ऐसा नहीं है आज का हास्य-साहित्य में समाहित नहीं होता तो इसका कारण हमारे मंचीय कवियों का सस्तापन है। उन्होंने अपने शब्द गिरा दिये जिससे हास्य का स्तर गिर गया है।

हास्य की आपके जीवन में क्या भूमिका है?

व्यक्ति में ही समाज है और मेरा समाज तो पराधीनता से पीड़ित था और आज़ादी का आन्दोलन उस समय चल रहा था तो हास्य में मैंने ऐसी रचना की जो गोरी सरकार को कचोटती हो, उसके अवगुणों को सामने लाती हो। वही मेरा ईष्ट रहा, वही मेरा माध्यम रहा। उसको मैंने ध्यान में रखा।

आपने कई युगों को देखा है। जब आपने हास्य में पदार्पण किया तो उससे पूर्व हास्य की क्या स्थिति थी?

यह कहना तो अतिशयोक्ति होगी कि मैंने ही हास्य रस की स्थापना की, लेकिन इतना अवश्य कहूंगा कि मुझसे पहले बड़े हास्य कवि कम थे। जब हिन्दी में हास्य लिखा जाने लगा तो उसमें उर्दू की छाया थी और अकबर इलाहाबादी जैसे कवियों की ध्वनि सुनाई पड़ती थी। मैंने कभी किसी अन्य भाषा के हास्य कवियों से प्रेरणा ग्रहण नहीं की। मैंने जो अपने नेत्रों से समाज को देखा उसी पर ध्यान केन्द्रित किया, उसी पर हास्य लिखा, उसी पर व्यंग्य लिखा और वही मेरी सिद्धि और प्रसिद्धि का कारण बना।

यह सच है कि आपने हास्य रचना में किसी अन्य भाषा की छाया नहीं पड़ने दी। स्वतंत्र रहकर विशेष रूप से पत्नी को माध्यम बनाकर लिखा लेकिन आप जिस समय मंच पर हास्य रस की स्थापना कर रहे थे उस समय समकालीन कवियों में कुछ नाम याद आते हैं?

हां, आते हैं लेकिन दुःख की बात है कि उनको मंच पर भुला दिया गया। उनका न उस समय साहित्य में स्थान था, न इस समय है। जैसे कि वंशीधर शुक्ल, रमई काका, बेढब बनारसी, पैरोडी इनका साहित्य उत्तम है। नाथू रामशंकर आगरा वाले ने भी कुरीतियों के खिलाफ हास्य रस को माध्यम बनाया। पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी ने हास्य के लिए हास्य नहीं लिखा उन्होंने तो एक प्रकार से लोगों की आलोचना की। वे शुद्ध हास्य नहीं लिखते थे। हां, उनकी बातचीत में अवश्य हास्य आ जाता था।

हिन्दी काव्य मंच में हास्य रस को प्रतिष्ठापित करने में आपने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आपका ही रोपा हुआ पौधा आज विशाल वट वृक्ष के रूप में है। आज हास्य कवियों का जो रुतबा है वह अन्य विधाओं के कवियों का नहीं है और आजकल जो सबसे अधिक अगर देखा जाय तो आपके शिष्य ही अधिक हैं। आज मंच पर जो हास्य है उसे आप देख कर कैसा अनुभव करते हैं?

मेरे मन में इनको देख कर दुख का भाव भी होता है और कभी-कभी यह भी लगता है कि मैंने ऐसे कवियों को उभार कर गलत किया जो इस नयी शताब्दी में साहित्यकारों के साथ बैठने की स्थिति में नहीं हैं। उनके जीवन में भी साहित्य नहीं रहा और साहित्यकार भी उनको मान देने में संकोच करते हैं। इसका एक कारण मैं अपने को भी मानता हूं कि गलत आदमियों को प्रेरणा दी और आगे बढ़ाया और आदमी की पहचान मुझे ठीक से नहीं हुई कि भविष्य में यह आदमी अर्थ प्रधान हो जाएगा। कविता इसके लिए गौण हो जाएगी। आज लोग समाज के लिए, राष्ट्र के लिए नहीं लिखते; अपनी प्रशंसा के लिए, पारिश्रमिक के लिए लिखते हैं। यह बड़े दुःख व संताप का कारण है।

आपके उन शिष्यों में जिन्होंने आपसे हास्य कविता का पाठ सीखा, उनमें कुछ नाम आप बता सकते हैं जिन्होंने आपकी परम्परा को आगे बढ़ाया?

इससे कुछ कवियों के मन में ठेस पहुंच सकती है लेकिन आपने पूछा तो मैं बता देता हूं। इनमें काका हाथरसी, ओमप्रकाश आदित्य के साहित्य में हास्य होता है। हुल्लड़ मुरादाबादी, जैमिनी हरियाणवी इत्यादि ने भी इस परम्परा को आगे बढ़ाया है।

क्या आपको यह सोचकर पीड़ा होती है कि हास्य को जिस रूप में होना चाहिए, उस रूप में नहीं होता है?

हां, हास्य के उस रूप में आज कविता मंच पर नहीं पढ़ी जाती है।

जिस समय आप लिख रहे थे उस समय हिन्दी में कोई समृद्ध परम्परा नहीं थी; उर्दू में अकबर इलाहाबादी आदि लिख रहे थे परन्तु उस समय हिन्दी में ये केन्द्रीय विधा नहीं थी तो आपने इस विधा को क्यों चुना?

इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मैं ब्रजवासी हूं और जो ब्रजवासी होता है उसके जीवन में हास्य-विनोद होता है। और जो कवि

होता है उसमें समाज का प्रतिबिम्ब झलकता ही है। तो मुझमें ब्रज की वंशी बजकर आगे चलकर उसके रसियों से, तानों से, गानों, से लोकगीतों से मैं प्रभावित होकर मौर्ख्य विनोद की ओर बढ़ा। गुलाबराय बड़ा मीठा लिखते थे। हरिशंकर शर्मा, केदारनाथ इन सबका साथ मुझे मिला। फिर मैं हिन्दी में ब्रज भाषा को छोड़कर, खड़ी बोली में लिखने लगा। उस समय एक 'नोक-झोंक' पत्रिका निकलती थी। उसमें मेरी कविताएं प्रकाशित होती थीं। 'वीणा' में भी मेरी कविता छपती थी। और जब दिल्ली आया तो राजनीतिक वातावरण और सामाजिक व्यवस्था देखकर समाज पर व्यंग्य करने लग गया और जो कुरीतियां हमारे समाज में हैं उसे दूर करने के लिए हास्य-व्यंग्य के द्वारा प्रयास करने लगा। इस प्रकार मेरा राजनीतिक और सामाजिक हास्य दिल्ली के वातावरण से प्रभावित हुआ।

काका हाथरसी की कविताओं में काकी बहुत आती हैं और लगता है कि ये उनकी काव्य प्रेरणा हैं। आपकी काव्य की प्रेरणा कौन हैं?

काकी उनकी प्रेरणा नहीं हैं। उन्होंने मेरी पत्नी वाली कविता से प्रेरणा लेकर उसे अपनी कविता में जमा दिया। और लोग उसे उनकी प्रेरणा मानने लगे।

यानी पत्नीवाद की स्थापना आपने की और अन्य कवियों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया है?

लेकिन यह तो चलता ही है। साहित्य का कवि कहीं न कहीं से प्रेरणा ग्रहण करता ही है। जहां तक मेरे पत्नीवाद का संबंध है मेरी पत्नी सीधी-सादी है। वह न तो साहित्य समझती है और न मेरी रचनाओं को सुनती है और पढ़ती है। जब मैंने पत्नी को लेकर कविता लिखी तो मुझे लोगों ने पत्नीवाद को बढ़ावा देने वाला कहा, तो मैंने सोचा कि तब तो पत्नीवाद की परिभाषा ही अच्छी तरह देनी चाहिए। और फिर मैंने पत्नी को परमेश्वर के रूप में स्थापित किया।

आप अकेले ऐसे साहित्यकार नजर आते हैं जिन्होंने हिन्दी में गद्य और पद्य दोनों ही विधाओं में बड़ी ही कुशलता से लिखा है। आप कौन-सी विधा को ज्यादा संप्रेषणीय मानते हैं? आपका मन ज्यादा किसमें रमा?

मैंने पद्य में लिखना शुरू किया। फिर मुझे लगा कि जो मैं कहना चाहता हूं वह विस्तार से नहीं आ पाता है इसलिए मैंने गद्य पकड़ा। दूसरा कारण और भी है कि मैंने देखा कि हिन्दी के सभी दैनिक, साप्ताहिक और मासिक में व्यंग्य रचनाओं को गद्य के रूप में विशेष ध्यान से पढ़ा जाता है। तो फिर मैंने व्यंग्य लेख ज्यादा लिखे। मेरी पुस्तक की एक लाख प्रतियां बिकीं। मैंने करीब एक दर्जन पॉकेट बुक्स लिखीं। बात बात में बात, चकाचक, नारद जी खबर लाए हैं आदि स्तंभ लेख मैंने लिखे।

स्तंभ लेखों में ज्यादा कौन-सा चर्चित रहा?

'यत्र-तत्र सर्वत्र' जो दैनिक स्तंभ था, चर्चित रहा। 'नारद जी खबर लाए हैं' ऐसा चला कि जो धाक व्यंग्य की शुरू में थी, आज भी है। इसके लिए मैं सरस्वती की कृपा मानता हूं।

कहने का अर्थ है कि गद्य को आप ज्यादा संप्रेषणीय मानते हैं?

हां, इसका उत्तम उदाहरण यह है कि शंकर का कार्टून हिन्दुस्तान टाइम्स में छपा करता था जो हिन्दी में भी दिया जाता था। उसका स्तंभ मैं लिखा करता था तो वह कार्टून से भी ऊपर निकल जाता था।

व्यंग्यकार का निशाना या तो राजनीति होती है या सामाजिक कुरीतियां, विषमताएं, विसंगतियां होती हैं। आपके द्वारा किये गये व्यंग्य प्रहारों ने निश्चित रूप से राजनीतिज्ञों को या किसी समाज के समुदाय को चोट पहुंचाई होगी? तो क्या इसके लिए आपको कभी कोई कटु अनुभव या खामियाजा भुगतना पड़ा?

दो अवसर इस तरह के प्राप्त हुए। एक तो अलीगढ़ में स्वतंत्रता से पूर्व एक आयोजन किया गया था। उस समय जिन्ना की और उसके पाकिस्तान राज्य की स्थापना की मैंने खिंचाई की थी कि लम्बी नाक मेरी पत्नी जैसी, छरहरी काया, सब कुछ मिल जाता समान है उनका पाकिस्तान तुम्हारे... जैसा समान है। इससे धर्म समाज के लड़कों एवं कुछ अन्य छात्रों में संघर्ष की नौबत आ गयी और दंगे वाली स्थिति पैदा हो गई। तब मुझे ठहरने के स्थान पर किसी तरह ले गए। लेकिन उन्होंने कहा हम इनका दिल्ली स्टेशन तक पीछा करेंगे। दोनों पक्ष अपने-अपने हथियारों के साथ थे लेकिन कलेक्टर ने स्थिति को देख कर पुलिस व्यवस्था की। लेकिन मुझे अंदर ही दुख था कि कहीं हिन्दू-मुस्लिम दंगा न हो जाय। जब मैं गाड़ी में बैठा तो दोनों समुदाय के लोग ग़ाज़ियाबाद तक आ गए। बाद में मेरा पीछा छोड़ा। दूसरी घटना सहारनपुर में हुई। सहारनपुर में उस समय 'डिफेंस एक्ट' लग रहा था। तो सरकार ने हिन्दी कवियों व साहित्यकारों को बुलाकर अपनी प्रसिद्धि पाने के लिए कवि सम्मेलन किया। मैं और नीरज भी सरकारी गुलामी धन्धे में फंस गये। हास्य की जब मांग की गई तब मैंने पत्नी वाली कविता पढ़ी जिसके अन्त में पत्नी को 'हिटलर' कहा गया है और सबसे बड़ा 'डिक्टेटर' समझा गया है। चर्चिल-सा डिक्टेटर मानों यह उनके ध्यान में आ गया। यह आपातकाल के समय की बात है। बाद में सभी लोगों को तो लिफाफा देकर विदा किया लेकिन मुझे रोक लिया गया। मुझे आदेश दिया गया कि इसे अदालत में पेश किया जाय और इसे जाने न दिया जाय। जब यह बात सहारनपुर के विख्यात लेखक, पत्रकार कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' तथा मेरठ के विश्वम्भर सहाय प्रेमी, जो सुनने आए थे, उनको मालूम हुई कि मुझे रोक लिया गया है तो उन्होंने आग्रह किया... इससे तुम्हारा नाम

बिगड़ जाएगा और इससे तुम्हारी बदनामी हो जायेगी। यह खबर सारे देश में फैल जाएगी और इसकी निंदा होने लगेगी। आपको उद्देश्य गड़बड़ा जाएगा, तो उनकी समझ में बात आ गई और उन्होंने मुझे छोड़ दिया। जब मैंने नेताजी पर कविताएं लिखीं तो उनको पढ़कर दिल्ली के अंग्रेज ने हिन्दुस्तान टाइम्स के... देवदास गांधी को नोटिस भेज दिया। तब देवदास ने मुझे कविता की 'टोन' डाउन करने को कहा। और बोले कि हम तो अहिंसा की बात करते हैं। लेकिन मैंने ऐसा करने से इंकार कर दिया। बाद में लाहौर के हिन्दी प्रकाशक द्वारा कविता छपवायी। जब उसकी प्रति आयी सब खरीद ली और उसका मुफ्त वितरण कराया। एक प्रति नेहरू जी को मिली, उन्होंने इसकी प्रशंसा की और उस समय जो आज़ाद हिन्द फौज के मुकदमे की वकालत कर रहे थे, के लिए मुझे लिखने को कहा जिसकी प्रति हाथोंहाथ बिक गई। लेकिन मुझे मारपीट या जेल जाने जैसी नौबत कभी नहीं आयी।

आपके देश में लाखों प्रशंसक हैं आप किसके प्रशसंक हैं?

मैं स्वयं अपना प्रशंसक हूं। मैं खुद अपना आलोचक और प्रशंसक हूं। 'अपने सर होली' मेरी एक कविता भी है।

आज दृश्य माध्यमों का जोर है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को अक्षर के लिए खतरा माना जा रहा है, ऐसे में हास्य-व्यंग्य का क्या भविष्य होगा?

युग कोई भी आ जाए–हास्य-व्यंग्य उसके द्वारा ध्वनित होता रहेगा, प्रचारित होता रहेगा, उसे कोई खतरा नहीं है। इसका मतलब यह है कि पुस्तक का विकल्प टी.वी. नहीं हो सकता। उसके स्वर डूब जाते हैं। उसकी एक सीमा है। जबकि पुस्तक ज्यादा टिकाऊ होती है। पुस्तक प्रकाशन का भविष्य भी अंधकारमय नहीं है। यह बात दूसरी है कि आज लोगों में पुस्तकें कम बिक रही हैं।

व्यास जी, आपके कई रूप रहे हैं–स्तंभकार, पत्रकार, ब्रजभाषा कवि, हास्य व्यंग्य के कवि, आयोजक के रूप में–आपको कौन-सा रूप सर्वाधिक प्रिय लगता है?

ये सब हमारी संतान की तरह हैं। इसमें कोई भेद नहीं है। लोग भेद करते हैं।

आपने राजधानी में 'हिन्दी भवन' स्थापित करके हिन्दी की बड़ी उल्लेखनीय सेवा की है। इसकी स्थापना में आपको किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। हिन्दी भवन का क्या भविष्य है?

हिन्दी भवन की स्थापना तो हुई। लेकिन कब्जे की कठिनाई आयी। एक रास्ता बीच से आता था, उसको बन्द करने के लिए मुझे अनशन करना पड़ा। जब मैंने पं. कमला त्रिपाठी, जो कांग्रेस के प्रधान थे, उनके सामने अनशन करने की धमकी दी, तो उन्होंने कहा कि हत्या का पाप आप मुझ पर लाद रहे हैं, आप ऐसा मत करिये। मैंने इसके लिए इन्दिरा जी से कहा, तब जाकर धर्मवीर जी हमारे अध्यक्ष हुए। भवन तो बन गया है किन्तु इसकी प्राण-प्रतिष्ठा नहीं हुई है। जब तक हिन्दी भवन कार्यरूप में नहीं आता मुझे शांति नहीं मिलेगी।

आप अपने किन-किन अग्रजों से प्रभावित हुए हैं एवं किन-किन नए रचनाकारों में आपको संभावनाएं दिखाई देती हैं?

इसमें बाबू गुलाबराय, कन्हैयालाल पोद्दार, पं. बनारसी दास चतुर्वेदी आदि ने मुझे प्रेरित किया एवं मेरा मार्गदर्शन किया। सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, मैथिलीशरण जी आदि मेरे सभी आयोजनों में आते और मुझे प्रोत्साहित करते। उनकी ही प्रेरणा से मैंने खंड काव्य लिखा। जिनको वामपंथी कहा जाता है उनमें सबसे अधिक रचनाधर्मिता का गुण है। वे समाज की विषमता को उद्धृत करने में सक्षम हैं।

आज के साहित्यकार हास्य एवं व्यंग्य अलग-अलग लिखते हैं लेकिन आप हास्य में व्यंग्य और व्यंग्य में हास्य लिखते हैं। इस तरह हास्य में व्यंग्य का घुसपैठ हो रहा है। आपका क्या मानना है?

श्रेष्ठ हास्य वही होता है जिसमें व्यंग्य नहीं होता है और श्रेष्ठ व्यंग्य वही होता है जिसमें हास्य का प्रवेश नहीं होता है। मैं तो एक उक्ति कहता हूं कि हास्य सोने की अंगूठी है और व्यंग्य नगीना है। हास्य शरीर है और व्यंग्य उसका प्राण है। दोनों में समन्वय होना चाहिए।

आप कई पुरस्कारों से पुरस्कृत हैं और आपको देश के हास्य-व्यंग्य के सर्वोच्च सम्मान प्राप्त हुए हैं। अभी हिन्दी अकादमी, दिल्ली सरकार का शिखर सम्मान 'श्लाका सम्मान' भी आपको मिला है। इसे प्राप्त करके आप कैसा अनुभव कर रहे हैं?

पुरस्कार पाकर गौरवान्वित होकर कौन प्रसन्न नहीं होता है। मैं बहुत गौरवान्वित हूं। यह मेरी यत्किंचित साहित्य-सेवा के लिए मिला है। इससे अन्य साहित्यकारों को प्रेरणा मिलेगी। लेकिन यह सम्मान मुझे उम्र के अंतिम पड़ाव में मिला है, जबकि साहित्यकारों को सम्मान ठीक समय पर दिया जाना चाहिए, जिससे उनके जीवन और लेखन को बल मिले।

आंसू कंपे कपोल पर, ज्यों पत्ते पर ओस
तेरे बिन मन हो गया, सहमा-सा खरगोश।
–नेहा वैद

मानस-मंदिर का महादीप

आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य महाप्रज्ञ जैन धर्माचार्य और प्रसिद्ध विचारक हैं। 'गूंजते स्वर, बहरे कान' उनका कविता-संकलन है।

जीवन का हर श्वास मुझे विश्वास दिए चलता है
भावी का हर चरण मुझे आभास दिए चलता है
धरती पर चलने वालों को नीच मान मैं नहीं रुका हूं
अम्बर में उड़ने वालों को उच्च मान मैं नहीं झुका हूं
रुकने का था अर्थ यही बस फिर से कृत का अवलोकन हो
झुकने का था अर्थ यही बस सबसे मेरा अपनापन हो
सच मानो तुम हीनभाव से मेरा चरण कभी न रुकेगा
सच मानो तुम दीनभाव से मेरा सीस कहीं न झुकेगा
मेरे मानस-मंदिर में जब कल्पवृक्ष स्वयं फलता है
सिमट-सिमटकर रेखाओं ने मानस को संकोच दिया है
बलखाती रजनी ने ही तो कण-कण को आलोक दिया है
सन्देहों की वेदी पर विश्वासों की आग जली है
जो न निराश हुआ उसकी ही जग में अब तक आस फली है
मेरे हर स्पन्दन से अब तक अन्तरिक्ष में क्रांति हुई है
प्यास नहीं मेरे कंठों में मुझको केवल भ्रान्ति हुई है
मेरे मानस-मन्दिर में जब महादीप स्वयं जलता है।

समय के सारथी

मेरे प्यारे वतन

कमलेश शर्मा

कमलेश शर्मा का जन्म 29 जून, 1968 को ग्राम चाचर, जिला भिण्ड (म. प्र.) में हुआ था। उनका 'पीर किससे कहें?' गीत-संग्रह प्रकाशित है। वर्तमान में वे शिव नारायण इण्टर कॉलेज, इटावा (उ. प्र.) में प्रवक्ता पद पर कार्यरत हैं।

ओ अनोखे चमन! मेरे प्यारे वतन,
जान तुझपे ही अपनी लुटा जाएंगे।
हम हैं गुल इस गुलिस्तां के हंसते हुए,
आन पर अपनी हस्ती मिटा जाएंगे।।

हमने तेरे अजिर में की अठखेलियां,
मलयगिरि की पवन के झकोरों के संग।
जल किलोलों में बीता है बचपन सदा,
गंगा-जमुना की पावन हिलोरों के संग।।
तेरी रज भी सुवासित है चन्दन-सी मां,
पूर्ण श्रद्धा से माथे लगा जाएंगे।
हम हैं गुल इस गुलिस्तां के हंसते हुए,
आन पर अपनी हस्ती मिटा जाएंगे।।

तेरी इज़्ज़त बचाने भगत सिंह ने,
ओढ़ा बलिदानी चोला बसन्ती रंगा।
देश-हित प्राण-आहुति चढ़ाने सहज,
देश की भक्ति-प्रतिमूर्ति फांसी टंगा।।
हमको भी उस बसन्ती क़फ़न की कसम,
प्राण-आहुति को तुझ पर चढ़ा जाएंगे।
हम हैं गुल इस गुलिस्तां के हंसते हुए,
आन पर अपनी हस्ती मिटा जाएंगे।।

होम जीवन किया था समर-यज्ञ में,
छंट सका तब गुलामी का नीहार था।
रक्तरंजित हुई रत्नगर्भा थी जब,
हो सका तब दिवाकर का दीदार था।।
हम भी दीपक की बन लघु शिखा देश में,
देश-भक्ति की ज्वाला मिटा जाएंगे।
हम हैं गुल इस गुलिस्तां के हंसते हुए,
आन पर अपनी हस्ती मिटा जाएंगे।।

तुलसी मीठे वचन तै सुख उपजत चहुं ओर,
वसीकरण एक मंत्र है, परिहरु वचन कठोर।
—तुलसीदास

G.K. Singhal (Bobby)
09212161851
09311070707

Pardeep (Rinku)
09212161852
09811821083

Om Aggarwal Associates

SALE & PURCHASE

Delhi, Rohini, Pitampura, Narela, Bawana, NCR & Commercials

Spl. in : Bawana, Narela Industrial Plot Factory & Flat

Shop No.-1, Main Bawana Road, Opp. Maharishi Balmiki Hospital, Pooth Khurdh, Bawana, Delhi-110039
e-mail : amaggarwalassociates@hotmail.com

Extra Purity
with Natural Taste*...
Royal Blue
Packaged
Drinking Water
TASTE IN EVERY DROPS
NANO
TECHNOLOGY
TO SAVE
NATURAL MINERALS
Available in 250ml, 500ml, 1 litre, 1.2 Litre, 2 Litre & 20 Litre
Special
Royal Blue
PACKAGED DRINKING WATER
For Further Enquiry Call : 0931135455, 09311443631